**मंगल मूल लगन दिनु आवा । हिम रितु अगहनु मासु सुहावा ॥**
**ग्रह तिथि नखतु जोगु बर बारू । लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू ॥**

मङ्गलोंका मूल लग्नका दिन आ गया। हेमन्त-ऋतु और सुहावना अगहनका महीना था। ग्रह, तिथि, नक्षत्र, योग और वार श्रेष्ठ थे। लग्न (मुहूर्त) शोधकर ब्रह्माजीने उसपर विचार किया, ॥ ३ ॥

**पठै दीन्हि नारद सन सोई । गनी जनक के गनकन्ह जोई ॥**
**सुनी सकल लोगन्ह यह बाता । कहहिं जोतिषी आहिं बिधाता ॥**

और उस (लग्नपत्रिका) को नारदजीके हाथ [जनकजीके यहाँ] भेज दिया। जनकजीके ज्योतिषियोंने भी वही गणना कर रखी थी। जब सब लोगोंने यह बात सुनी तब वे कहने लगे—यहाँके ज्योतिषी भी ब्रह्मा ही हैं॥ ४॥

**दो०—धेनुधूरि बेला बिमल सकल सुमंगल मूल।**
**बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल॥ ३१२॥**

निर्मल और सभी सुन्दर मङ्गलोंकी मूल गोधूलिकी पवित्र वेला आ गयी और अनुकूल शकुन होने लगे, यह जानकर ब्राह्मणोंने जनकजीसे कहा॥ ३१२॥

**उपरोहितहि कहेउ नरनाहा। अब बिलंब कर कारनु काहा॥**
**सतानंद तब सचिव बोलाए। मंगल सकल साजि सब ल्याए॥**

तब राजा जनकने पुरोहित शतानन्दजीसे कहा कि अब देरका क्या कारण है। तब शतानन्दजीने मन्त्रियोंको बुलाया। वे सब मङ्गलका सामान सजाकर ले आये॥ १॥

**संख निसान पनव बहु बाजे। मंगल कलस सगुन सुभ साजे॥**
**सुभग सुआसिनि गावहिं गीता। करहिं बेद धुनि बिप्र पुनीता॥**

शङ्ख, नगाड़े, ढोल और बहुत-से बाजे बजने लगे तथा मङ्गल-कलश और शुभ शकुनकी वस्तुएँ (दधि, दूर्वा आदि) सजायी गयीं। सुन्दर सुहागिन स्त्रियाँ गीत गा रही हैं और पवित्र ब्राह्मण वेदकी ध्वनि कर रहे हैं॥ २॥

**लेन चले सादर एहि भाँती। गए जहाँ जनवास बराती॥**
**कोसलपति कर देखि समाजू। अति लघु लाग तिन्हहि सुरराजू॥**

सब लोग इस प्रकार आदरपूर्वक बारातको लेने चले और जहाँ बरातियोंका जनवासा था, वहाँ गये। अवधपति दशरथजीका समाज (वैभव) देखकर उनको देवराज इन्द्र भी बहुत ही तुच्छ लगने लगे॥ ३॥

**भयउ समउ अब धारिअ पाऊ। यह सुनि परा निसानहिं घाऊ॥**
**गुरहि पूछि करि कुल बिधि राजा। चले संग मुनि साधु समाजा॥**

[उन्होंने जाकर विनती की—] समय हो गया, अब पधारिये। यह सुनते ही नगाड़ोंपर चोट पड़ी। गुरु वसिष्ठजीसे पूछकर और कुलकी सब रीतियोंको करके राजा दशरथजी मुनियों और साधुओंके समाजको साथ लेकर चले॥ ४॥

**दो०—भाग्य बिभव अवधेस कर देखि देव ब्रह्मादि।**
**लगे सराहन सहस मुख जानि जनम निज बादि॥ ३१३॥**

अवधनरेश दशरथजीका भाग्य और वैभव देखकर और अपना जन्म व्यर्थ समझकर, ब्रह्माजी आदि देवता हजारों मुखोंसे उसकी सराहना करने लगे॥ ३१३॥

**सुरन्ह सुमंगल अवसरु जाना। बरषहिं सुमन बजाइ निसाना॥**
**सिव ब्रह्मादिक बिबुध बरूथा। चढ़े बिमानन्हि नाना जूथा॥**

देवगण सुन्दर मङ्गलका अवसर जानकर, नगाड़े बजा-बजाकर फूल बरसाते हैं। शिवजी, ब्रह्माजी आदि देववृन्द यूथ (टोलियाँ) बना-बनाकर विमानोंपर जा चढ़े॥ १॥

**प्रेम पुलक तन हृदयँ उछाहू। चले बिलोकन राम बिआहू॥**
**देखि जनकपुरु सुर अनुरागे। निज निज लोक सबहिं लघु लागे॥**

और प्रेमसे पुलकित-शरीर हो तथा हृदयमें उत्साह भरकर श्रीरामचन्द्रजीका विवाह देखने चले। जनकपुरको देखकर देवता इतने अनुरक्त हो गये कि उन सबको अपने-अपने लोक बहुत तुच्छ लगने लगे॥ २॥

**चितवहिं चकित बिचित्र बिताना। रचना सकल अलौकिक नाना॥**
**नगर नारि नर रूप निधाना। सुघर सुधरम सुसील सुजाना॥**

विचित्र मण्डपको तथा नाना प्रकारकी सब अलौकिक रचनाओंको वे चकित होकर देख रहे हैं। नगरके स्त्री-पुरुष रूपके भण्डार, सुघड़, श्रेष्ठ धर्मात्मा, सुशील और सुजान हैं॥ ३॥

**तिन्हहि देखि सब सुर सुरनारीं। भए नखत जनु बिधु उजिआरीं॥**
**बिधिहि भयउ आचरजु बिसेषी। निज करनी कछु कतहुँ न देखी॥**

उन्हें देखकर सब देवता और देवाङ्गनाएँ ऐसे प्रभाहीन हो गये जैसे चन्द्रमाके उजियालेमें तारागण फीके पड़ जाते हैं। ब्रह्माजीको विशेष आश्चर्य हुआ; क्योंकि वहाँ उन्होंने अपनी कोई करनी (रचना) तो कहीं देखी ही नहीं॥ ४॥

**दो०—सिवँ समुझाए देव सब जनि आचरज भुलाहु।**
**हृदयँ बिचारहु धीर धरि सिय रघुबीर बिआहु॥ ३१४॥**

तब शिवजीने सब देवताओंको समझाया कि तुमलोग आश्चर्यमें मत भूलो। हृदयमें धीरज धरकर विचार तो करो कि यह [भगवान्‌की महामहिमामयी निजशक्ति] श्रीसीताजीका और [अखिल ब्रह्माण्डोंके परम ईश्वर साक्षात् भगवान्] श्रीरामचन्द्रजीका विवाह है॥ ३१४॥

**जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं॥**
**करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय रामु कहेउ कामारी॥**

जिनका नाम लेते ही जगत्‌में सारे अमङ्गलोंकी जड़ कट जाती है और चारों पदार्थ (अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष) मुट्ठीमें आ जाते हैं, ये वही [जगत्‌के माता-पिता] श्रीसीतारामजी हैं; कामके शत्रु शिवजीने ऐसा कहा॥ १॥

**एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा। पुनि आगें बर बसह चलावा॥**
**देवन्ह देखे दसरथु जाता। महामोद मन पुलकित गाता॥**

इस प्रकार शिवजीने देवताओंको समझाया और फिर अपने श्रेष्ठ बैल नन्दीश्वरको आगे बढ़ाया। देवताओंने देखा कि दशरथजी मनमें बड़े ही प्रसन्न और शरीरसे पुलकित हुए चले जा रहे हैं॥ २॥

**साधु समाज संग महिदेवा। जनु तनु धरें करहिं सुख सेवा॥**
**सोहत साथ सुभग सुत चारी। जनु अपबरग सकल तनुधारी॥**

उनके साथ [परम हर्षयुक्त] साधुओं और ब्राह्मणोंकी मण्डली ऐसी शोभा दे रही है, मानो समस्त सुख शरीर धारण करके उनकी सेवा कर रहे हों। चारों सुन्दर पुत्र साथमें ऐसे सुशोभित हैं, मानो सम्पूर्ण मोक्ष (सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य) शरीर धारण किये हुए हों॥ ३॥

**मरकत कनक बरन बर जोरी। देखि सुरन्ह भै प्रीति न थोरी॥**
**पुनि रामहि बिलोकि हियँ हरषे। नृपहि सराहि सुमन तिन्ह बरषे॥**

मरकतमणि और सुवर्णके रंगकी सुन्दर जोड़ियोंको देखकर देवताओंको कम प्रीति नहीं हुई (अर्थात् बहुत ही प्रीति हुई)। फिर श्रीरामचन्द्रजीको देखकर वे हृदयमें (अत्यन्त) हर्षित हुए और राजाकी सराहना करके उन्होंने फूल बरसाये॥ ४॥

**दो०—राम रूपु नख सिख सुभग बारहिं बार निहारि।**
**पुलक गात लोचन सजल उमा समेत पुरारि॥ ३१५॥**

नखसे शिखातक श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर रूपको बार-बार देखते हुए पार्वतीजीसहित श्रीशिवजीका शरीर पुलकित हो गया और उनके नेत्र [प्रेमाश्रुओंके] जलसे भर गये॥ ३१५॥

**केकि कंठ दुति स्यामल अंगा। तड़ित बिनिंदक बसन सुरंगा॥**
**ब्याह बिभूषन बिबिध बनाए। मंगल सब सब भाँति सुहाए॥**

रामजीका मोरके कण्ठकी-सी कान्तिवाला [हरिताभ] श्याम शरीर है। बिजलीका अत्यन्त निरादर करनेवाले प्रकाशमय सुन्दर [पीत] रंगके वस्त्र हैं। सब मङ्गलरूप और सब प्रकारसे सुन्दर भाँति-भाँतिके विवाहके आभूषण शरीरपर सजाये हुए हैं॥ १॥

**सरद बिमल बिधु बदनु सुहावन। नयन नवल राजीव लजावन॥**
**सकल अलौकिक सुंदरताई। कहि न जाइ मनहीं मन भाई॥**

उनका सुन्दर मुख शरत्पूर्णिमाके निर्मल चन्द्रमाके समान और [मनोहर] नेत्र नवीन कमलको लजानेवाले हैं। सारी सुन्दरता अलौकिक है। (मायाकी बनी नहीं है, दिव्य सच्चिदानन्दमयी है) वह कही नहीं जा सकती, मन-ही-मन बहुत प्रिय लगती है॥ २॥

**बंधु मनोहर सोहहिं संगा। जात नचावत चपल तुरंगा॥**
**राजकुअँर बर बाजि देखावहिं। बंस प्रसंसक बिरिद सुनावहिं॥**

साथमें मनोहर भाई शोभित हैं, जो चञ्चल घोड़ोंको नचाते हुए चले जा रहे हैं। राजकुमार श्रेष्ठ घोड़ोंको (उनकी चालको) दिखला रहे हैं और वंशकी प्रशंसा करनेवाले (मागध-भाट) विरुदावली सुना रहे हैं॥ ३॥

**जेहि तुरंग पर रामु बिराजे। गति बिलोकि खगनायकु लाजे॥**
**कहि न जाइ सब भाँति सुहावा। बाजि बेषु जनु काम बनावा॥**

जिस घोड़ेपर श्रीरामजी विराजमान हैं, उसकी [तेज] चाल देखकर गरुड़ भी लजा जाते हैं। उसका वर्णन नहीं हो सकता, वह सब प्रकारसे सुन्दर है। मानो कामदेवने ही घोड़ेका वेष धारण कर लिया हो॥ ४॥

**छं०—जनु बाजि बेषु बनाइ मनसिजु राम हित अति सोहई।**
**आपनें बय बल रूप गुन गति सकल भुवन बिमोहई॥**
**जगमगत जीनु जराव जोति सुमोति मनि मानिक लगे।**
**किंकिनि ललाम लगामु ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे॥**

मानो श्रीरामचन्द्रजीके लिये कामदेव घोड़ेका वेष बनाकर अत्यन्त शोभित हो रहा है। वह अपनी अवस्था, बल, रूप, गुण और चालसे समस्त लोकोंको मोहित कर रहा है। सुन्दर मोती, मणि और माणिक्य लगी हुई जड़ाऊ जीन ज्योतिसे जगमगा रहा है। उसकी सुन्दर घुँघरू लगी ललित लगामको देखकर देवता, मनुष्य और मुनि सभी ठगे जाते हैं।

**दो०—प्रभु मनसहिं लयलीन मनु चलत बाजि छबि पाव।**
**भूषित उड़गन तड़ित घनु जनु बर बरहि नचाव॥ ३१६॥**

प्रभुकी इच्छामें अपने मनको लीन किये चलता हुआ वह घोड़ा बड़ी शोभा पा रहा है। मानो तारागण तथा बिजलीसे अलङ्कृत मेघ सुन्दर मोरको नचा रहा हो॥ ३१६॥

**जेहिं बर बाजि रामु असवारा। तेहि सारदउ न बरनै पारा॥**
**संकरु राम रूप अनुरागे। नयन पंचदस अति प्रिय लागे॥**

जिस श्रेष्ठ घोड़ेपर श्रीरामचन्द्रजी सवार हैं, उसका वर्णन सरस्वतीजी भी नहीं कर सकतीं। शङ्करजी श्रीरामचन्द्रजीके रूपमें ऐसे अनुरक्त हुए कि उन्हें अपने पंद्रह नेत्र इस समय बहुत ही प्यारे लगने लगे॥ १॥

**हरि हित सहित रामु जब जोहे। रमा समेत रमापति मोहे॥**
**निरखि राम छबि बिधि हरषाने। आठइ नयन जानि पछिताने॥**

भगवान् विष्णुने जब प्रेमसहित श्रीरामको देखा,तब वे [रमणीयताकी मूर्ति] श्रीलक्ष्मीजीके पति श्रीलक्ष्मीजीसहित मोहित हो गये। श्रीरामचन्द्रजीकी शोभा देखकर ब्रह्माजी बड़े प्रसन्न हुए, पर अपने आठ ही नेत्र जानकर पछताने लगे॥ २॥

**सुर सेनप उर बहुत उछाहू। बिधि ते डेवढ़ लोचन लाहू॥**
**रामहि चितव सुरेस सुजाना। गौतम श्रापु परम हित माना॥**

देवताओंके सेनापति स्वामिकार्तिकके हृदयमें बड़ा उत्साह है, क्योंकि वे ब्रह्माजीसे ड्योढ़े अर्थात् बारह नेत्रोंसे रामदर्शनका सुन्दर लाभ उठा रहे हैं। सुजान इन्द्र [अपने हजार नेत्रोंसे] श्रीरामचन्द्रजीको देख रहे हैं और गौतमजीके शापको अपने लिये परम हितकर मान रहे हैं॥ ३॥

**देव सकल सुरपतिहि सिहाहीं। आजु पुरंदर सम कोउ नाहीं॥**
**मुदित देवगन रामहि देखी। नृपसमाज दुहुँ हरषु बिसेषी॥**

सभी देवता देवराज इन्द्रसे ईर्ष्या कर रहे हैं [और कह रहे हैं] कि आज इन्द्रके समान भाग्यवान् दूसरा कोई नहीं है। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर देवगण प्रसन्न हैं और दोनों राजाओंके समाजमें विशेष हर्ष छा रहा है॥ ४॥

**छं०—अति हरषु राजसमाज दुहु दिसि दुंदुभीं बाजहिं घनी।**
**बरषहिं सुमन सुर हरषि कहि जय जयति जय रघुकुलमनी॥**
**एहि भाँति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं।**
**रानी सुआसिनि बोलि परिछनि हेतु मंगल साजहीं॥**

दोनों ओरसे राजसमाजमें अत्यन्त हर्ष है और बड़े जोरसे नगाड़े बज रहे हैं। देवता प्रसन्न होकर और 'रघुकुलमणि श्रीरामकी जय हो, जय हो, जय हो' कहकर फूल बरसा रहे हैं। इस प्रकार बारातको आती हुई जानकर बहुत प्रकारके बाजे बजने लगे और रानी सुहागिन स्त्रियोंको बुलाकर परछनके लिये मङ्गलद्रव्य सजाने लगीं।

**दो०—सजि आरती अनेक बिधि मंगल सकल सँवारि।**
**चलीं मुदित परिछनि करन गजगामिनि बर नारि॥ ३१७॥**

अनेक प्रकारसे आरती सजकर और समस्त मङ्गलद्रव्योंको यथायोग्य सजाकर गजगामिनी (हाथीकी-सी चालवाली) उत्तम स्त्रियाँ आनन्दपूर्वक परछनके लिये चलीं॥ ३१७॥

**बिधुबदनीं सब सब मृगलोचनि। सब निज तन छबि रति मदु मोचनि॥**
**पहिरें बरन बरन बर चीरा। सकल बिभूषन सजें सरीरा॥**

सभी स्त्रियाँ चन्द्रमुखी (चन्द्रमाके समान मुखवाली) और सभी मृगलोचनी (हरिणकी-सी आँखोंवाली) हैं और सभी अपने शरीरकी शोभासे रतिके गर्वको छुड़ानेवाली हैं। रंग-रंगकी सुन्दर साड़ियाँ पहने हैं और शरीरपर सब आभूषण सजे हुए हैं॥ १॥

**सकल सुमंगल अंग बनाएँ। करहिं गान कलकंठि लजाएँ॥**
**कंकन किंकिनि नूपुर बाजहिं। चालि बिलोकि काम गज लाजहिं॥**

समस्त अङ्गोंको सुन्दर मङ्गल पदार्थोंसे सजाये हुए वे कोयलको भी लजाती हुई [मधुर स्वरसे] गान कर रही हैं। कंगन, करधनी और नूपुर बज रहे हैं। स्त्रियोंकी चाल देखकर कामदेवके हाथी भी लजा जाते हैं॥ २॥

**बाजहिं बाजने बिबिध प्रकारा। नभ अरु नगर सुमंगलचारा॥**
**सची सारदा रमा भवानी। जे सुरतिय सुचि सहज सयानी॥**

अनेक प्रकारके बाजे बज रहे हैं, आकाश और नगर दोनों स्थानोंमें सुन्दर मङ्गलाचार हो रहे हैं। शची (इन्द्राणी), सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती और जो स्वभावसे ही पवित्र और सयानी देवाङ्गनाएँ थीं,॥ ३॥

**कपट नारि बर बेष बनाई। मिलीं सकल रनिवासहिं जाई॥**
**करहिं गान कल मंगल बानीं। हरष बिबस सब काहुँ न जानीं॥**

वे सब कपटसे सुन्दर स्त्रीका वेष बनाकर रनिवासमें जा मिलीं और मनोहर वाणीसे मङ्गलगान करने लगीं। सब कोई हर्षके विशेष वश थे, अतः किसीने उन्हें पहचाना नहीं॥ ४॥

**छं०—को जान केहि आनंद बस सब ब्रह्मु बर परिछन चली।**
**कल गान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भली॥**
**आनंदकंदु बिलोकि दूलहु सकल हियँ हरषित भई।**
**अंभोज अंबक अंबु उमगि सुअंग पुलकावलि छई॥**

कौन किसे जाने-पहिचाने! आनन्दके वश हुई सब दूलह बने हुए ब्रह्मका परछन करने चलीं। मनोहर गान हो रहा है। मधुर-मधुर नगाड़े बज रहे हैं, देवता फूल बरसा रहे हैं, बड़ी अच्छी शोभा है। आनन्दकन्द दूलहको देखकर सब स्त्रियाँ हृदयमें हर्षित हुईं। उनके कमल-सरीखे नेत्रोंमें प्रेमाश्रुओंका जल उमड़ आया और सुन्दर अङ्गोंमें पुलकावली छा गयी।

**दो०—जो सुखु भा सिय मातु मन देखि राम बर बेषु।**
**सो न सकहिं कहि कलप सत सहस सारदा सेषु॥ ३१८॥**

श्रीरामचन्द्रजीका वरवेष देखकर सीताजीकी माता सुनयनाजीके मनमें जो सुख हुआ, उसे हजारों सरस्वती और शेषजी सौ कल्पोंमें भी नहीं कह सकते [अथवा लाखों सरस्वती और शेष लाखों कल्पोंमें भी नहीं कह सकते]॥ ३१८॥

**नयन नीरु हटि मंगल जानी। परिछनि करहिं मुदित मन रानी॥**
**बेद बिहित अरु कुल आचारू। कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू॥**

मङ्गल-अवसर जानकर नेत्रोंके जलको रोके हुए रानी प्रसन्न मनसे परछन कर रही हैं। वेदोंमें कहे हुए तथा कुलाचारके अनुसार सभी व्यवहार रानीने भलीभाँति किये॥ १॥

**पंच सबद धुनि मंगल गाना। पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना॥**
**करि आरती अरघु तिन्ह दीन्हा। राम गमनु मंडप तब कीन्हा॥**

पञ्चशब्द (तन्त्री, ताल, झाँझ, नगारा और तुरही—इन पाँच प्रकारके बाजोंके शब्द), पञ्चध्वनि (वेदध्वनि, वन्दिध्वनि, जयध्वनि, शङ्खध्वनि और हुलूध्वनि) और मङ्गलगान हो रहे हैं। नाना प्रकारके वस्त्रोंके पाँवड़े पड़ रहे हैं। उन्होंने (रानीने) आरती करके अर्घ्य दिया, तब श्रीरामजीने मण्डपमें गमन किया॥ २॥

**दसरथु सहित समाज बिराजे। बिभव बिलोकि लोकपति लाजे॥**
**समयँ समयँ सुर बरषहिं फूला। सांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला॥**

दशरथजी अपनी मण्डलीसहित विराजमान हुए। उनके वैभवको देखकर लोकपाल भी लजा गये। समय-समयपर देवता फूल बरसाते हैं और भूदेव ब्राह्मण समयानुकूल शान्ति-पाठ करते हैं॥ ३॥

**नभ अरु नगर कोलाहल होई। आपनि पर कछु सुनइ न कोई॥**
**एहि बिधि रामु मंडपहिं आए। अरघु देइ आसन बैठाए॥**

आकाश और नगरमें शोर मच रहा है। अपनी-परायी कोई कुछ भी नहीं सुनता। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी मण्डपमें आये और अर्घ्य देकर आसनपर बैठाये गये॥ ४॥

**छं०—बैठारि आसन आरती करि निरखि बरु सुखु पावहीं।**
**मनि बसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं॥**
**ब्रह्मादि सुरबर बिप्र बेष बनाइ कौतुक देखहीं।**
**अवलोकि रघुकुल कमल रबि छबि सुफल जीवन लेखहीं॥**

आसनपर बैठाकर, आरती करके दूलहको देखकर स्त्रियाँ सुख पा रही हैं। वे ढेर-के-ढेर मणि, वस्त्र और गहने निछावर करके मङ्गल गा रही हैं। ब्रह्मा आदि श्रेष्ठ देवता ब्राह्मणका वेष बनाकर कौतुक देख रहे हैं। वे रघुकुलरूपी कमलके प्रफुल्लित करनेवाले सूर्य श्रीरामचन्द्रजीकी छबि देखकर अपना जीवन सफल जान रहे हैं।

**दो०—नाऊ बारी भाट नट राम निछावरि पाइ।**
**मुदित असीसहिं नाइ सिर हरषु न हृदयँ समाइ॥ ३१९॥**

नाई, बारी, भाट और नट श्रीरामचन्द्रजीकी निछावर पाकर आनन्दित हो सिर नवाकर आशिष देते हैं; उनके हृदयमें हर्ष समाता नहीं है॥ ३१९॥

**मिले जनकु दसरथु अति प्रीतीं। करि बैदिक लौकिक सब रीतीं॥**
**मिलत महा दोउ राज बिराजे। उपमा खोजि खोजि कबि लाजे॥**

वैदिक और लौकिक सब रीतियाँ करके जनकजी और दशरथजी बड़े प्रेमसे मिले। दोनों महाराज मिलते हुए बड़े ही शोभित हुए, कवि उनके लिये उपमा खोज-खोजकर लजा गये॥ १॥

**लही न कतहुँ हारि हियँ मानी। इन्ह सम एइ उपमा उर आनी॥**
**सामध देखि देव अनुरागे। सुमन बरषि जसु गावन लागे॥**

जब कहीं भी उपमा नहीं मिली, तब हृदयमें हार मानकर उन्होंने मनमें यही उपमा निश्चित की कि इनके समान ये ही हैं। समधियोंका मिलाप या परस्पर सम्बन्ध देखकर देवता अनुरक्त हो गये और फूल बरसाकर उनका यश गाने लगे॥ २॥

**जगु बिरंचि उपजावा जब तें। देखे सुने ब्याह बहु तब तें॥**
**सकल भाँति सम साजु समाजू। सम समधी देखे हम आजू॥**

[वे कहने लगे—] जबसे ब्रह्माजीने जगत्‌को उत्पन्न किया, तबसे हमने बहुत विवाह देखे-सुने; परन्तु सब प्रकारसे समान साज-समाज और बराबरीके (पूर्ण समतायुक्त) समधी तो आज ही देखे॥ ३॥

**देव गिरा सुनि सुंदर साँची। प्रीति अलौकिक दुहु दिसि माची॥**
**देत पाँवड़े अरघु सुहाए। सादर जनकु मंडपहिं ल्याए॥**

देवताओंकी सुन्दर सत्यवाणी सुनकर दोनों ओर अलौकिक प्रीति छा गयी। सुन्दर पाँवड़े और अर्घ्य देते हुए जनकजी दशरथजीको आदरपूर्वक मण्डपमें ले आये॥ ४॥

**छं०—मंडपु बिलोकि बिचित्र रचनाँ रुचिरताँ मुनि मन हरे।**
**निज पानि जनक सुजान सब कहुँ आनि सिंघासन धरे॥**
**कुल इष्ट सरिस बसिष्ठ पूजे बिनय करि आसिष लही।**
**कौसिकहि पूजत परम प्रीति कि रीति तौ न परै कही॥**

मण्डपको देखकर उसकी विचित्र रचना और सुन्दरतासे मुनियोंके मन भी हरे गये (मोहित हो गये)। सुजान जनकजीने अपने हाथोंसे ला-लाकर सबके लिये सिंहासन रखे। उन्होंने अपने कुलके इष्टदेवताके समान वसिष्ठजीकी पूजा की और विनय करके आशीर्वाद प्राप्त किया। विश्वामित्रजीकी पूजा करते समयकी परम प्रीतिकी रीति तो कहते ही नहीं बनती।

**दो०—बामदेव आदिक रिषय पूजे मुदित महीस।**
**दिए दिब्य आसन सबहि सब सन लही असीस॥ ३२०॥**

राजाने वामदेव आदि ऋषियोंकी प्रसन्न मनसे पूजा की। सभीको दिव्य आसन दिये और सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया॥ ३२०॥

**बहुरि कीन्हि कोसलपति पूजा। जानि ईस सम भाउ न दूजा॥**
**कीन्हि जोरि कर बिनय बड़ाई। कहि निज भाग्य बिभव बहुताई॥**

फिर उन्होंने कोसलाधीश राजा दशरथजीकी पूजा उन्हें ईश (महादेवजी) के समान जानकर की, कोई दूसरा भाव न था। तदनन्तर [उनके सम्बन्धसे] अपने भाग्य और वैभवके विस्तारकी सराहना करके हाथ जोड़कर विनती और बड़ाई की॥ १॥

**पूजे भूपति सकल बराती। समधी सम सादर सब भाँती॥**
**आसन उचित दिए सब काहू। कहौं काह मुख एक उछाहू॥**

राजा जनकजीने सब बरातियोंका समधी दशरथजीके समान ही सब प्रकारसे आदरपूर्वक पूजन किया और सब किसीको उचित आसन दिये। मैं एक मुखसे उस उत्साहका क्या वर्णन करूँ॥ २॥

**सकल बरात जनक सनमानी। दान मान बिनती बर बानी॥**
**बिधि हरि हरु दिसिपति दिनराऊ। जे जानहिं रघुबीर प्रभाऊ॥**

राजा जनकने दान, मान-सम्मान, विनय और उत्तम वाणीसे सारी बारातका सम्मान किया। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, दिक्पाल और सूर्य जो श्रीरघुनाथजीका प्रभाव जानते हैं,॥ ३॥

**कपट बिप्र बर बेष बनाएँ। कौतुक देखहिं अति सचु पाएँ॥**
**पूजे जनक देव सम जानें। दिए सुआसन बिनु पहिचानें॥**

वे कपटसे ब्राह्मणोंका सुन्दर वेष बनाये बहुत ही सुख पाते हुए सब लीला देख रहे थे। जनकजीने उनको देवताओंके समान जानकर उनका पूजन किया और बिना पहचाने भी उन्हें सुन्दर आसन दिये॥ ४॥

**छं०—पहिचान को केहि जान सबहि अपान सुधि भोरी भई।**
**आनंद कंदु बिलोकि दूलहु उभय दिसि आनँदमई॥**
**सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दए।**
**अवलोकि सीलु सुभाउ प्रभु को बिबुध मन प्रमुदित भए॥**

कौन किसको जाने-पहिचाने! सबको अपनी ही सुध भूली हुई है। आनन्दकन्द दूलहको देखकर दोनों ओर आनन्दमयी स्थिति हो रही है। सुजान (सर्वज्ञ) श्रीरामचन्द्रजीने देवताओंको पहचान लिया और उनकी मानसिक पूजा करके उन्हें मानसिक आसन दिये। प्रभुका शील-स्वभाव देखकर देवगण मनमें बहुत आनन्दित हुए।

**दो०—रामचंद्र मुख चंद्र छबि लोचन चारु चकोर।**
**करत पान सादर सकल प्रेमु प्रमोदु न थोर॥ ३२१॥**

श्रीरामचन्द्रजीके मुखरूपी चन्द्रमाकी छबिको सभीके सुन्दर नेत्ररूपी चकोर आदरपूर्वक पान कर रहे हैं; प्रेम और आनन्द कम नहीं है (अर्थात् बहुत है)॥ ३२१॥

**समउ बिलोकि बसिष्ठ बोलाए। सादर सतानंदु सुनि आए॥**
**बेगि कुअँरि अब आनहु जाई। चले मुदित मुनि आयसु पाई॥**

समय देखकर वसिष्ठजीने शतानन्दजीको आदरपूर्वक बुलाया। वे सुनकर आदरके साथ आये। वसिष्ठजीने कहा—अब जाकर राजकुमारीको शीघ्र ले आइये। मुनिकी आज्ञा पाकर वे प्रसन्न होकर चले॥ १॥

**रानी सुनि उपरोहित बानी। प्रमुदित सखिन्ह समेत सयानी॥**
**बिप्र बधू कुल बृद्ध बोलाईं। करि कुलरीति सुमंगल गाईं॥**

बुद्धिमती रानी पुरोहितकी वाणी सुनकर सखियोंसमेत बड़ी प्रसन्न हुईं। ब्राह्मणोंकी स्त्रियों और कुलकी बूढ़ी स्त्रियोंको बुलाकर उन्होंने कुलरीति करके सुन्दर मङ्गलगीत गाये॥ २॥

**नारि बेष जे सुर बर बामा। सकल सुभायँ सुंदरी स्यामा॥**
**तिन्हहि देखि सुखु पावहिं नारीं। बिनु पहिचानि प्रानहु ते प्यारीं॥**

श्रेष्ठ देवाङ्गनाएँ, जो सुन्दर मनुष्य-स्त्रियोंके वेषमें हैं, सभी स्वभावसे ही सुन्दरी और श्यामा (सोलह वर्षकी अवस्थावाली) हैं। उनको देखकर रनिवासकी स्त्रियाँ सुख पाती हैं और बिना पहचानके ही वे सबको प्राणोंसे भी प्यारी हो रही हैं॥ ३॥

**बार बार सनमानहिं रानी। उमा रमा सारद सम जानी॥**
**सीय सँवारि समाजु बनाई। मुदित मंडपहिं चलीं लवाई॥**

उन्हें पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वतीके समान जानकर रानी बार-बार उनका सम्मान करती हैं। [रनिवासकी स्त्रियाँ और सखियाँ] सीताजीका शृंगार करके, मण्डली बनाकर, प्रसन्न होकर उन्हें मण्डपमें लिवा चलीं॥ ४॥

**छं०—चलि ल्याइ सीतहि सखीं सादर सजि सुमंगल भामिनीं।**
**नवसप्त साजे सुंदरीं सब मत्त कुंजर गामिनीं॥**
**कल गान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं काम कोकिल लाजहीं।**
**मंजीर नूपुर कलित कंकन ताल गति बर बाजहीं॥**

सुन्दर मङ्गलका साज सजकर [रनिवासकी] स्त्रियाँ और सखियाँ आदरसहित सीताजीको लिवा चलीं। सभी सुन्दरियाँ सोलहों शृंगार किये हुए मतवाले हाथियोंकी चालसे चलनेवाली हैं। उनके मनोहर गानको सुनकर मुनि ध्यान छोड़ देते हैं और कामदेवकी कोयलें भी लजा जाती हैं। पायजेब, पैंजनी और सुन्दर कंकण तालकी गतिपर बड़े सुन्दर बज रहे हैं।

**दो०—सोहति बनिता बृंद महुँ सहज सुहावनि सीय।**
**छबि ललना गन मध्य जनु सुषमा तिय कमनीय॥ ३२२॥**

सहज ही सुन्दरी सीताजी स्त्रियोंके समूहमें इस प्रकार शोभा पा रही हैं, मानो छबिरूपी ललनाओंके समूहके बीच साक्षात् परम मनोहर शोभारूपी स्त्री सुशोभित हो॥ ३२२॥

**सिय सुंदरता बरनि न जाई। लघु मति बहुत मनोहरताई॥**
**आवत दीखि बरातिन्ह सीता। रूप रासि सब भाँति पुनीता॥**

सीताजीकी सुन्दरताका वर्णन नहीं हो सकता, क्योंकि बुद्धि बहुत छोटी है और मनोहरता बहुत बड़ी है। रूपकी राशि और सब प्रकारसे पवित्र सीताजीको बरातियोंने आते देखा॥ १॥

**सबहि मनहिं मन किए प्रनामा। देखि राम भए पूरनकामा॥**
**हरषे दसरथ सुतन्ह समेता। कहि न जाइ उर आनँदु जेता॥**

सभीने उन्हें मन-ही-मन प्रणाम किया। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर तो सभी पूर्णकाम (कृतकृत्य) हो गये। राजा दशरथजी पुत्रोंसहित हर्षित हुए। उनके हृदयमें जितना आनन्द था, वह कहा नहीं जा सकता॥ २॥

**सुर प्रनामु करि बरिसहिं फूला। मुनि असीस धुनि मंगल मूला॥**
**गान निसान कोलाहलु भारी। प्रेम प्रमोद मगन नर नारी॥**

देवता प्रणाम करके फूल बरसा रहे हैं। मङ्गलोंकी मूल मुनियोंके आशीर्वादोंकी ध्वनि हो रही है। गानों और नगाड़ोंके शब्दसे बड़ा शोर मच रहा है। सभी नर-नारी प्रेम और आनन्दमें मग्न हैं॥ ३॥

**एहि बिधि सीय मंडपहिं आई। प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई॥**
**तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू। दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू॥**

इस प्रकार सीताजी मण्डपमें आयीं। मुनिराज बहुत ही आनन्दित होकर शान्तिपाठ पढ़ रहे हैं। उस अवसरकी सब रीति, व्यवहार और कुलाचार दोनों कुलगुरुओंने किये॥ ४॥

**छं०—आचारु करि गुर गौरि गनपति मुदित बिप्र पुजावहीं।**
**सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुखु पावहीं॥**
**मधुपर्क मंगल द्रब्य जो जेहि समय मुनि मन महुँ चहैं।**
**भरे कनक कोपर कलस सो तब लिएहिं परिचारक रहैं॥**

कुलाचार करके गुरुजी प्रसन्न होकर गौरीजी, गणेशजी और ब्राह्मणोंकी पूजा करा रहे हैं [अथवा ब्राह्मणोंके द्वारा गौरी और गणेशकी पूजा करवा रहे हैं]। देवता प्रकट होकर पूजा ग्रहण करते हैं, आशीर्वाद देते हैं और अत्यन्त सुख पा रहे हैं। मधुपर्क आदि जिस किसी भी माङ्गलिक पदार्थकी मुनि जिस समय भी मनमें चाहमात्र करते हैं, सेवकगण उसी समय सोनेकी परातोंमें और कलशोंमें भरकर उन पदार्थोंको लिये तैयार रहते हैं॥ १॥

**कुल रीति प्रीति समेत रबि कहि देत सबु सादर कियो।**
**एहि भाँति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंघासनु दियो॥**
**सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेमु काहु न लखि परै।**
**मन बुद्धि बर बानी अगोचर प्रगट कबि कैसें करै॥**

स्वयं सूर्यदेव प्रेमसहित अपने कुलकी सब रीतियाँ बता देते हैं और वे सब आदरपूर्वक की जा रही हैं। इस प्रकार देवताओंकी पूजा कराके मुनियोंने सीताजीको सुंदर सिंहासन दिया। श्रीसीताजी और श्रीरामजीका आपसमें एक-दूसरेको देखना तथा उनका परस्परका प्रेम किसीको लख नहीं पड़ रहा है। जो बात श्रेष्ठ मन, बुद्धि और वाणीसे भी परे है, उसे कवि क्योंकर प्रकट करे?॥ २॥

**दो०—होम समय तनु धरि अनलु अति सुख आहुति लेहिं।**
**बिप्र बेष धरि बेद सब कहि बिबाह बिधि देहिं॥ ३२३॥**

हवनके समय अग्निदेव शरीर धारण करके बड़े ही सुखसे आहुति ग्रहण करते हैं और सारे वेद ब्राह्मणका वेष धरकर विवाहकी विधियाँ बताये देते हैं॥ ३२३॥

**जनक पाटमहिषी जग जानी। सीय मातु किमि जाइ बखानी॥**
**सुजसु सुकृत सुख सुंदरताई। सब समेटि बिधि रची बनाई॥**

जनकजीकी जगद्विख्यात पटरानी और सीताजीकी माताका बखान तो हो ही कैसे सकता है। सुयश, सुकृत (पुण्य), सुख और सुन्दरता सबको बटोरकर विधाताने उन्हें सँवारकर तैयार किया है॥ १॥

**समउ जानि मुनिबरन्ह बोलाईं। सुनत सुआसिनि सादर ल्याईं॥**
**जनक बाम दिसि सोह सुनयना। हिमगिरि संग बनी जनु मयना॥**

समय जानकर श्रेष्ठ मुनियोंने उनको बुलवाया। यह सुनते ही सुहागिनी स्त्रियाँ उन्हें आदरपूर्वक ले आयीं। सुनयनाजी (जनकजीकी पटरानी) जनकजीकी बायीं ओर ऐसी सोह रही हैं, मानो हिमाचलके साथ मैनाजी शोभित हों॥ २॥

**कनक कलस मनि कोपर रूरे। सुचि सुगंध मंगल जल पूरे॥**
**निज कर मुदित रायँ अरु रानी। धरे राम के आगें आनी॥**

पवित्र, सुगन्धित और मङ्गल जलसे भरे सोनेके कलश और मणियोंकी सुन्दर परातें राजा और रानीने आनन्दित होकर अपने हाथोंसे लाकर श्रीरामचन्द्रजीके आगे रखीं॥ ३॥

**पढ़हिं बेद मुनि मंगल बानी। गगन सुमन झरि अवसरु जानी॥**
**बरु बिलोकि दंपति अनुरागे। पाय पुनीत पखारन लागे॥**

मुनि मङ्गलवाणीसे वेद पढ़ रहे हैं। सुअवसर जानकर आकाशसे फूलोंकी झड़ी लग गयी है। दूलहको देखकर राजा-रानी प्रेममग्न हो गये और उनके पवित्र चरणोंको पखारने लगे॥ ४॥

**छं०—लागे पखारन पाय पंकज प्रेम तन पुलकावली।**
**नभ नगर गान निसान जय धुनि उमगि जनु चहुँ दिसि चली॥**
**जे पद सरोज मनोज अरि उर सर सदैव बिराजहीं।**
**जे सकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलि मल भाजहीं॥**

वे श्रीरामजीके चरणकमलोंको पखारने लगे, प्रेमसे उनके शरीरमें पुलकावली छा रही है। आकाश और नगरमें होनेवाली गान, नगाड़े और जय-जयकारकी ध्वनि मानो चारों दिशाओंमें उमड़ चली। जो चरणकमल कामदेवके शत्रु श्रीशिवजीके हृदयरूपी सरोवरमें सदा ही विराजते हैं, जिनका एक बार भी स्मरण करनेसे मनमें निर्मलता आ जाती है और कलियुगके सारे पाप भाग जाते हैं,॥ १॥

**जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई।**
**मकरंदु जिन्ह को संभु सिर सुचिता अवधि सुर बरनई॥**
**करि मधुप मन मुनि जोगिजन जे सेइ अभिमत गति लहैं।**
**ते पद पखारत भाग्यभाजनु जनकु जय जय सब कहैं॥**

जिनका स्पर्श पाकर गौतम मुनिकी स्त्री अहल्याने, जो पापमयी थी, परमगति पायी, जिन चरणकमलोंका मकरन्दरस (गङ्गाजी) शिवजीके मस्तकपर विराजमान है, जिसको देवता पवित्रताकी सीमा बताते हैं; मुनि और योगीजन अपने मनको भौंरा बनाकर जिन चरणकमलोंका सेवन करके मनोवाञ्छित गति प्राप्त करते हैं; उन्हीं चरणोंको भाग्यके पात्र (बड़भागी) जनकजी धो रहे हैं; यह देखकर सब जय-जयकार कर रहे हैं॥ २॥

**बर कुअँरि करतल जोरि साखोचारु दोउ कुलगुर करैं।**
**भयो पानिगहनु बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं॥**

**सुखमूल दूलहु देखि दंपति पुलक तन हुलस्यो हियो।**
**करि लोक बेद बिधानु कन्यादानु नृपभूषन कियो॥**

दोनों कुलोंके गुरु वर और कन्याकी हथेलियोंको मिलाकर शाखोच्चार करने लगे। पाणिग्रहण हुआ देखकर ब्रह्मादि देवता, मनुष्य और मुनि आनन्दमें भर गये। सुखके मूल दूलहको देखकर राजा-रानीका शरीर पुलकित हो गया और हृदय आनन्दसे उमँग उठा। राजाओंके अलङ्कारस्वरूप महाराज जनकजीने लोक और वेदकी रीतिको करके कन्यादान किया॥ ३॥

**हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दई।**
**तिमि जनक रामहि सिय समरपी बिस्व कल कीरति नई॥**
**क्यों करै बिनय बिदेहु कियो बिदेहु मूरति सावँरीं।**
**करि होमु बिधिवत गाँठि जोरी होन लागीं भावँरीं॥**

जैसे हिमवान्‌ने शिवजीको पार्वतीजी और सागरने भगवान् विष्णुको लक्ष्मीजी दी थीं, वैसे ही जनकजीने श्रीरामचन्द्रजीको सीताजी समर्पित कीं, जिससे विश्वमें सुन्दर नवीन कीर्ति छा गयी। विदेह (जनकजी) कैसे विनती करें! उस साँवली मूर्तिने तो उन्हें सचमुच विदेह (देहकी सुध-बुधसे रहित) ही कर दिया। विधिपूर्वक हवन करके गठजोड़ी की गयी और भाँवरें होने लगीं॥ ४॥

**दो०—जय धुनि बंदी बेद धुनि मंगल गान निसान।**
**सुनि हरषहिं बरषहिं बिबुध सुरतरु सुमन सुजान॥ ३२४॥**

जयध्वनि, वन्दीध्वनि, वेदध्वनि, मङ्गलगान और नगाड़ोंकी ध्वनि सुनकर चतुर देवगण हर्षित हो रहे हैं और कल्पवृक्षके फूलोंको बरसा रहे हैं॥ ३२४॥

**कुअँरु कुअँरि कल भावँरि देहीं। नयन लाभु सब सादर लेहीं॥**
**जाइ न बरनि मनोहर जोरी। जो उपमा कछु कहौं सो थोरी॥**

वर और कन्या सुन्दर भाँवरें दे रहे हैं। सब लोग आदरपूर्वक [उन्हें देखकर] नेत्रोंका परम लाभ ले रहे हैं। मनोहर जोड़ीका वर्णन नहीं हो सकता, जो कुछ उपमा कहूँ वही थोड़ी होगी॥ १॥

**राम सीय सुंदर प्रतिछाहीं। जगमगात मनि खंभन माहीं॥**
**मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा। देखत राम बिआहु अनूपा॥**

श्रीरामजी और श्रीसीताजीकी सुन्दर परछाहीं मणियोंके खम्भोंमें जगमगा रही हैं, मानो कामदेव और रति बहुत-से रूप धारण करके श्रीरामजीके अनुपम विवाहको देख रहे हैं॥ २॥

**दरस लालसा सकुच न थोरी। प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी॥**
**भए मगन सब देखनिहारे। जनक समान अपान बिसारे॥**

उन्हें (कामदेव और रतिको) दर्शनकी लालसा और संकोच दोनों ही कम नहीं हैं (अर्थात् बहुत हैं); इसीलिये वे मानो बार-बार प्रकट होते और छिपते हैं। सब देखनेवाले आनन्दमग्न हो गये और जनकजीकी भाँति सभी अपनी सुध भूल गये॥ ३॥

**प्रमुदित मुनिन्ह भावँरीं फेरीं। नेगसहित सब रीति निबेरीं॥**
**राम सीय सिर सेंदुर देहीं। सोभा कहि न जाति बिधि केहीं॥**

मुनियोंने आनन्दपूर्वक भाँवरें फिरायीं और नेगसहित सब रीतियोंको पूरा किया। श्रीरामचन्द्रजी सीताजीके सिरमें सिंदूर दे रहे हैं; यह शोभा किसी प्रकार भी कही नहीं जाती॥ ४॥

**अरुन पराग जलजु भरि नीकें। ससिहि भूष अहि लोभ अमी कें॥**
**बहुरि बसिष्ठ दीन्हि अनुसासन। बरु दुलहिनि बैठे एक आसन॥**

मानो कमलको लाल परागसे अच्छी तरह भरकर अमृतके लोभसे साँप चन्द्रमाको भूषित कर रहा है। [यहाँ श्रीरामके हाथको कमलकी, सेंदुरको परागकी, श्रीरामकी श्याम भुजाको साँपकी और सीताजीके मुखको चन्द्रमाकी उपमा दी गयी है] फिर वसिष्ठजीने आज्ञा दी, तब दूलह और दुलहिन एक आसनपर बैठे॥ ५॥

**छं०—बैठे बरासन रामु जानकि मुदित मन दसरथु भए।**
**तनु पुलक पुनि पुनि देखि अपनें सुकृत सुरतरु फल नए॥**
**भरि भुवन रहा उछाहु राम बिबाहु भा सबहीं कहा।**
**केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक यहु मंगलु महा॥**

श्रीरामजी और जानकीजी श्रेष्ठ आसनपर बैठे; उन्हें देखकर दशरथजी मनमें बहुत आनन्दित हुए। अपने सुकृतरूपी कल्पवृक्षमें नये फल [आये] देखकर उनका शरीर बार-बार पुलकित हो रहा है। चौदहों भुवनोंमें उत्साह भर गया; सबने कहा कि श्रीरामचन्द्रजीका विवाह हो गया। जीभ एक है और यह मङ्गल महान् है; फिर भला, वह वर्णन करके किस प्रकार समाप्त किया जा सकता है!॥ १॥

**तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साज सँवारि कै।**
**मांडवी श्रुतकीरति उरमिला कुअँरि लईं हँकारि कै॥**
**कुसकेतु कन्या प्रथम जो गुन सील सुख सोभामई।**
**सब रीति प्रीति समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई॥**

तब वसिष्ठजीकी आज्ञा पाकर जनकजीने विवाहका सामान सजाकर माण्डवीजी, श्रुतकीर्तिजी और उर्मिलाजी—इन तीनों राजकुमारियोंको बुला लिया। कुशध्वजकी बड़ी कन्या माण्डवीजीको, जो गुण, शील, सुख और शोभाकी रूप ही थीं, राजा जनकने प्रेमपूर्वक सब रीतियाँ करके भरतजीको ब्याह दिया॥ २॥

**जानकी लघु भगिनी सकल सुंदरि सिरोमनि जानि कै।**
**सो तनय दीन्ही ब्याहि लखनहि सकल बिधि सनमानि कै॥**
**जेहि नामु श्रुतकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुन आगरी।**
**सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप सील उजागरी॥**

जानकीजीकी छोटी बहिन उर्मिलाजीको सब सुन्दरियोंमें शिरोमणि जानकर उस कन्याको सब प्रकारसे सम्मान करके, लक्ष्मणजीको ब्याह दिया; और जिनका नाम श्रुतकीर्ति है और जो सुन्दर नेत्रोंवाली, सुन्दर मुखवाली, सब गुणोंकी खान और रूप तथा शीलमें उजागर हैं, उनको राजाने शत्रुघ्नको ब्याह दिया॥ ३॥

**अनुरूप बर दुलहिनि परस्पर लखि सकुच हियँ हरषहीं।**
**सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुर गन बरषहीं॥**
**सुंदरीं सुंदर बरन्ह सह सब एक मंडप राजहीं।**
**जनु जीव उर चारिउ अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं॥**

दूलह और दुलहिनें परस्पर अपने-अपने अनुरूप जोड़ीको देखकर सकुचते हुए हृदयमें हर्षित हो रही हैं। सब लोग प्रसन्न होकर उनकी सुन्दरताकी सराहना करते हैं और देवगण फूल बरसा रहे हैं। सब सुन्दरी दुलहिनें सुन्दर दूल्होंके साथ एक ही मण्डपमें ऐसी शोभा पा रही हैं, मानो जीवके हृदयमें चारों अवस्थाएँ (जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय) अपने चारों स्वामियों (विश्व, तैजस, प्राज्ञ और ब्रह्म) सहित विराजमान हों॥ ४॥

**दो०—मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि।**
**जनु पाए महिपाल मनि क्रियन्ह सहित फल चारि॥ ३२५॥**

सब पुत्रोंको बहुओंसहित देखकर अवधनरेश दशरथजी ऐसे आनन्दित हैं, मानो वे राजाओंके शिरोमणि क्रियाओं (यज्ञक्रिया, श्रद्धाक्रिया, योगक्रिया और ज्ञानक्रिया) सहित चारों फल (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) पा गये हों॥ ३२५॥

**जसि रघुबीर ब्याह बिधि बरनी। सकल कुअँर ब्याहे तेहिं करनी॥**
**कहि न जाइ कछु दाइज भूरी। रहा कनक मनि मंडपु पूरी॥**

श्रीरामचन्द्रजीके विवाहकी जैसी विधि वर्णन की गयी, उसी रीतिसे सब राजकुमार विवाहे गये। दहेजकी अधिकता कुछ कही नहीं जाती; सारा मंडप सोने और मणियोंसे भर गया॥ १॥

**कंबल बसन बिचित्र पटोरे। भाँति भाँति बहु मोल न थोरे॥**
**गज रथ तुरग दास अरु दासी। धेनु अलंकृत कामदुहा सी॥**

बहुत-से कम्बल, वस्त्र और भाँति-भाँतिके विचित्र रेशमी कपड़े, जो थोड़ी कीमतके न थे (अर्थात् बहुमूल्य थे) तथा हाथी, रथ, घोड़े, दास-दासियाँ और गहनोंसे सजी हुई कामधेनु-सरीखी गायें— ॥ २ ॥

**बस्तु अनेक करिअ किमि लेखा। कहि न जाइ जानहिं जिन्ह देखा॥**
**लोकपाल अवलोकि सिहाने। लीन्ह अवधपति सबु सुखु माने॥**

[आदि] अनेकों वस्तुएँ हैं, जिनकी गिनती कैसे की जाय। उनका वर्णन नहीं किया जा सकता, जिन्होंने देखा है वही जानते हैं। उन्हें देखकर लोकपाल भी सिहा गये। अवधराज दशरथजीने सुख मानकर प्रसन्नचित्तसे सब कुछ ग्रहण किया॥ ३ ॥

**दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि भावा। उबरा सो जनवासेहिं आवा॥**
**तब कर जोरि जनकु मृदु बानी। बोले सब बरात सनमानी॥**

उन्होंने वह दहेजका सामान याचकोंको, जो जिसे अच्छा लगा, दे दिया। जो बच रहा, वह जनवासेमें चला आया। तब जनकजी हाथ जोड़कर सारी बारातका सम्मान करते हुए कोमल वाणीसे बोले॥ ४ ॥

**छं०—सनमानि सकल बरात आदर दान बिनय बड़ाइ कै।**
**प्रमुदित महा मुनि बृंद बंदे पूजि प्रेम लड़ाइ कै॥**
**सिरु नाइ देव मनाइ सब सन कहत कर संपुट किएँ।**
**सुर साधु चाहत भाउ सिंधु कि तोष जल अंजलि दिएँ॥**

आदर, दान, विनय और बड़ाईके द्वारा सारी बारातका सम्मान कर राजा जनकने महान् आनन्दके साथ प्रेमपूर्वक लड़ाकर (लाड़ करके) मुनियोंके समूहकी पूजा एवं वन्दना की। सिर नवाकर, देवताओंको मनाकर, राजा हाथ जोड़कर सबसे कहने लगे कि देवता और साधु तो भाव ही चाहते हैं (वे प्रेमसे ही प्रसन्न हो जाते हैं, उन पूर्णकाम महानुभावोंको कोई कुछ देकर कैसे सन्तुष्ट कर सकता है); क्या एक अञ्जलि जल देनेसे कहीं समुद्र सन्तुष्ट हो सकता है॥ १ ॥

**कर जोरि जनकु बहोरि बंधु समेत कोसलराय सों।**
**बोले मनोहर बयन सानि सनेह सील सुभाय सों॥**
**संबंध राजन रावरें हम बड़े अब सब बिधि भए।**
**एहि राज साज समेत सेवक जानिबे बिनु गथ लए॥**

फिर जनकजी भाईसहित हाथ जोड़कर कोसलाधीश दशरथजीसे स्नेह, शील और सुन्दर प्रेममें सानकर मनोहर वचन बोले—हे राजन्! आपके साथ सम्बन्ध हो जानेसे अब हम सब प्रकारसे बड़े हो गये। इस राज-पाटसहित हम दोनोंको आप बिना दामके लिये हुए सेवक ही समझियेगा॥ २ ॥

**ए दारिका परिचारिका करि पालिबीं करुना नई।**
**अपराधु छमिबो बोलि पठए बहुत हौं ढीट्यो कई॥**
**पुनि भानुकुलभूषन सकल सनमान निधि समधी किए।**
**कहि जाति नहिं बिनती परस्पर प्रेम परिपूरन हिए॥**

इन लड़कियोंको टहलनी मानकर, नयी-नयी दया करके पालन कीजियेगा। मैंने बड़ी ढिठाई की कि आपको यहाँ बुला भेजा, अपराध क्षमा कीजियेगा। फिर सूर्यकुलके भूषण दशरथजीने समधी जनकजीको सम्पूर्ण सम्मानका निधि कर दिया (इतना सम्मान किया कि वे सम्मानके भण्डार ही हो गये)। उनकी परस्परकी विनय कही नहीं जाती, दोनोंके हृदय प्रेमसे परिपूर्ण हैं॥ ३॥

**बृंदारका गन सुमन बरिसहिं राउ जनवासेहि चले।**
**दुंदुभी जय धुनि बेद धुनि नभ नगर कौतूहल भले॥**
**तब सखीं मंगल गान करत मुनीस आयसु पाइ कै।**
**दूलह दुलहिनिन्ह सहित सुंदरि चलीं कोहबर ल्याइ कै॥**

देवतागण फूल बरसा रहे हैं; राजा जनवासेको चले। नगाड़ेकी ध्वनि, जयध्वनि और वेदकी ध्वनि हो रही है; आकाश और नगर दोनोंमें खूब कौतूहल हो रहा है (आनन्द छा रहा है), तब मुनीश्वरकी आज्ञा पाकर सुन्दरी सखियाँ मङ्गलगान करती हुई दुलहिनोंसहित दूल्होंको लिवाकर कोहबरको चलीं॥ ४॥

**दो०—पुनि पुनि रामहि चितव सिय सकुचति मनु सकुचै न।**
**हरत मनोहर मीन छबि प्रेम पिआसे नैन॥ ३२६॥**

सीताजी बार-बार रामजीको देखती हैं और सकुचा जाती हैं; पर उनका मन नहीं सकुचाता। प्रेमके प्यासे उनके नेत्र सुन्दर मछलियोंकी छबिको हर रहे हैं॥ ३२६॥

## मासपारायण, ग्यारहवाँ विश्राम

**स्याम सरीरु सुभायँ सुहावन। सोभा कोटि मनोज लजावन॥**
**जावक जुत पद कमल सुहाए। मुनि मन मधुप रहत जिन्ह छाए॥**

श्रीरामचन्द्रजीका साँवला शरीर स्वभावसे ही सुन्दर है। उसकी शोभा करोड़ों कामदेवोंको लजानेवाली है। महावरसे युक्त चरणकमल बड़े सुहावने लगते हैं, जिनपर मुनियोंके मनरूपी भौंरे सदा छाये रहते हैं॥ १॥

**पीत पुनीत मनोहर धोती। हरति बाल रबि दामिनि जोती॥**
**कल किंकिनि कटि सूत्र मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर॥**

पवित्र और मनोहर पीली धोती प्रातःकालके सूर्य और बिजलीकी ज्योतिको हरे लेती है। कमरमें सुन्दर किंकिणी और कटिसूत्र हैं। विशाल भुजाओंमें सुन्दर आभूषण सुशोभित हैं॥ २॥

**पीत जनेउ महाछबि देई। कर मुद्रिका चोरि चितु लेई॥**
**सोहत ब्याह साज सब साजे। उर आयत उरभूषन राजे॥**

पीला जनेऊ महान् शोभा दे रहा है। हाथकी अँगूठी चित्तको चुरा लेती है। ब्याहके सब साज सजे हुए वे शोभा पा रहे हैं। चौड़ी छातीपर हृदयपर पहननेके सुन्दर आभूषण सुशोभित हैं॥ ३॥

**पिअर उपरना काखासोती। दुहुँ आँचरन्हि लगे मनि मोती॥**
**नयन कमल कल कुंडल काना। बदनु सकल सौंदर्ज निधाना॥**

पीला दुपट्टा काँखासोती (जनेऊकी तरह) शोभित है, जिसके दोनों छोरोंपर मणि और मोती लगे हैं। कमलके समान सुन्दर नेत्र हैं, कानोंमें सुन्दर कुण्डल हैं और मुख तो सारी सुन्दरताका खजाना ही है॥ ४॥

**सुंदर भृकुटि मनोहर नासा। भाल तिलकु रुचिरता निवासा॥**
**सोहत मौरु मनोहर माथे। मंगलमय मुकुता मनि गाथे॥**

सुन्दर भौंहें और मनोहर नासिका है। ललाटपर तिलक तो सुन्दरताका घर ही है। जिसमें मङ्गलमय मोती और मणि गुँथे हुए हैं, ऐसा मनोहर मौर माथेपर सोह रहा है॥ ५॥

**छं०—गाथे महामनि मौर मंजुल अंग सब चित चोरहीं।**
**पुर नारि सुर सुंदरीं बरहि बिलोकि सब तिन तोरहीं॥**
**मनि बसन भूषन वारि आरति करहिं मंगल गावहीं।**
**सुर सुमन बरिसहिं सूत मागध बंदि सुजसु सुनावहीं॥**

सुन्दर मौरमें बहुमूल्य मणियाँ गुँथी हुई हैं, सभी अङ्ग चित्तको चुराये लेते हैं। सब नगरकी स्त्रियाँ और देवसुन्दरियाँ दूलहको देखकर तिनका तोड़ रही हैं (उनकी बलैयाँ ले रही हैं) और मणि, वस्त्र तथा आभूषण निछावर करके आरती उतार रही और मङ्गलगान कर रही हैं। देवता फूल बरसा रहे हैं और सूत, मागध तथा भाट सुयश सुना रहे हैं॥ १॥

**कोहबरहिं आने कुअँर कुअँरि सुआसिनिन्ह सुख पाइ कै।**
**अति प्रीति लौकिक रीति लागीं करन मंगल गाइ कै॥**

**लहकौरि गौरि सिखाव रामहि सीय सन सारद कहैं।**
**रनिवासु हास बिलास रस बस जन्म को फलु सब लहैं॥**

सुहागिनी स्त्रियाँ सुख पाकर कुँअर और कुमारियोंको कोहबर (कुलदेवताके स्थान) में लायीं और अत्यन्त प्रेमसे मङ्गलगीत गा-गाकर लौकिक रीति करने लगीं। पार्वतीजी श्रीरामचन्द्रजीको लहकौर (वर-वधूका परस्पर ग्रास देना) सिखाती हैं और सरस्वतीजी सीताजीको सिखाती हैं। रनिवास हास-विलासके आनन्दमें मग्न है, [श्रीरामजी और सीताजीको देख-देखकर] सभी जन्मका परम फल प्राप्त कर रही हैं॥ २॥

**निज पानि मनि महुँ देखिअति मूरति सुरूपनिधान की।**
**चालति न भुजबल्ली बिलोकनि बिरह भय बस जानकी॥**
**कौतुक बिनोद प्रमोदु प्रेमु न जाइ कहि जानहिं अलीं।**
**बर कुअँरि सुंदर सकल सखीं लवाइ जनवासेहि चलीं॥**

अपने हाथकी मणियोंमें सुन्दर रूपके भण्डार श्रीरामचन्द्रजीकी परछाहीं दीख रही है। यह देखकर जानकीजी दर्शनमें वियोग होनेके भयसे बाहुरूपी लताको और दृष्टिको हिलाती-डुलाती नहीं हैं। उस समयके हँसी-खेल और विनोदका आनन्द और प्रेम कहा नहीं जा सकता, उसे सखियाँ ही जानती हैं। तदनन्तर वर-कन्याओंको सब सुन्दर सखियाँ जनवासेको लिवा चलीं॥ ३॥

**तेहि समय सुनिअ असीस जहँ तहँ नगर नभ आनँदु महा।**
**चिरु जिअहुँ जोरीं चारु चार्‌यो मुदित मन सबहीं कहा॥**
**जोगींद्र सिद्ध मुनीस देव बिलोकि प्रभु दुंदुभि हनी।**
**चले हरषि बरषि प्रसून निज निज लोक जय जय जय भनी॥**

उस समय नगर और आकाशमें जहाँ सुनिये, वहीं आशीर्वादकी ध्वनि सुनायी दे रही है और महान् आनन्द छाया है। सभीने प्रसन्न मनसे कहा कि सुन्दर चारों जोड़ियाँ चिरंजीवी हों। योगिराज, सिद्ध, मुनीश्वर और देवताओंने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर दुन्दुभी बजायी और हर्षित होकर फूलोंकी वर्षा करते हुए तथा 'जय हो, जय हो,जय हो' कहते हुए वे अपने-अपने लोकको चले॥ ४॥

**दो०—सहित बधूटिन्ह कुअँर सब तब आए पितु पास।**
**सोभा मंगल मोद भरि उमगेउ जनु जनवास॥ ३२७॥**

तब सब (चारों) कुमार बहुओंसहित पिताजीके पास आये। ऐसा मालूम होता था मानो शोभा, मङ्गल और आनन्दसे भरकर जनवासा उमड़ पड़ा हो॥ ३२७॥

**पुनि जेवनार भई बहु भाँती। पठए जनक बोलाइ बराती॥**
**परत पाँवड़े बसन अनूपा। सुतन्ह समेत गवन कियो भूपा॥**

फिर बहुत प्रकारकी रसोई बनी। जनकजीने बरातियोंको बुला भेजा। राजा दशरथजीने पुत्रोंसहित गमन किया। अनुपम वस्त्रोंके पाँवड़े पड़ते जाते हैं॥ १॥

**सादर सब के पाय पखारे। जथाजोगु पीढ़न्ह बैठारे॥**
**धोए जनक अवधपति चरना। सीलु सनेहु जाइ नहिं बरना॥**

आदरके साथ सबके चरण धोये और सबको यथायोग्य पीढ़ोंपर बैठाया। तब जनकजीने अवधपति दशरथजीके चरण धोये। उनका शील और स्नेह वर्णन नहीं किया जा सकता॥ २॥

**बहुरि राम पद पंकज धोए। जे हर हृदय कमल महुँ गोए॥**
**तीनिउ भाइ राम सम जानी। धोए चरन जनक निज पानी॥**

फिर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको धोया, जो श्रीशिवजीके हृदय-कमलमें छिपे रहते हैं। तीनों भाइयोंको श्रीरामचन्द्रजीके ही समान जानकर जनकजीने उनके भी चरण अपने हाथोंसे धोये॥ ३॥

**आसन उचित सबहि नृप दीन्हे। बोलि सूपकारी सब लीन्हे॥**
**सादर लगे परन पनवारे। कनक कील मनि पान सँवारे॥**

राजा जनकजीने सभीको उचित आसन दिये और सब परसनेवालोंको बुला लिया। आदरके साथ पत्तलें पड़ने लगीं, जो मणियोंके पत्तोंसे सोनेकी कील लगाकर बनायी गयी थीं॥ ४॥

**दो०—सूपोदन सुरभी सरपि सुंदर स्वादु पुनीत।**
**छन महुँ सब कें परुसि गे चतुर सुआर बिनीत॥ ३२८॥**

चतुर और विनीत रसोइये सुन्दर, स्वादिष्ट और पवित्र दाल-भात और गायका [सुगन्धित] घी क्षणभरमें सबके सामने परस गये॥ ३२८॥

**पंच कवल करि जेवन लागे। गारि गान सुनि अति अनुरागे॥**
**भाँति अनेक परे पकवाने। सुधा सरिस नहिं जाहिं बखाने॥**

सब लोग पंचकौर करके (अर्थात् 'प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा और समानाय स्वाहा' इन मन्त्रोंका उच्चारण करते हुए पहले पाँच ग्रास लेकर) भोजन करने लगे। गालीका गाना सुनकर वे अत्यन्त प्रेममग्न हो गये। अनेकों तरहके अमृतके समान (स्वादिष्ट) पकवान परसे गये, जिनका बखान नहीं हो सकता॥ १॥

**परुसन लगे सुआर सुजाना। बिंजन बिबिध नाम को जाना॥**
**चारि भाँति भोजन बिधि गाई। एक एक बिधि बरनि न जाई॥**

चतुर रसोइये नाना प्रकारके व्यञ्जन परसने लगे, उनका नाम कौन जानता है। चार प्रकारके (चर्व्य, चोष्य, लेह्य, पेय अर्थात् चबाकर, चूसकर, चाटकर और पीकर खानेयोग्य) भोजनकी विधि कही गयी है, उनमेंसे एक-एक विधिके इतने पदार्थ बने थे कि जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता॥ २॥

**छरस रुचिर बिंजन बहु जाती। एक एक रस अगनित भाँती॥**
**जेवँत देहिं मधुर धुनि गारी। लै लै नाम पुरुष अरु नारी॥**

छहों रसोंके बहुत तरहके सुन्दर (स्वादिष्ट) व्यञ्जन हैं। एक-एक रसके अनगिनती प्रकारके बने हैं। भोजन करते समय पुरुष और स्त्रियोंके नाम ले-लेकर स्त्रियाँ मधुर ध्वनिसे गाली दे रही हैं (गाली गा रही हैं)॥ ३॥

**समय सुहावनि गारि बिराजा। हँसत राउ सुनि सहित समाजा॥**
**एहि बिधि सबहीं भोजनु कीन्हा। आदर सहित आचमनु दीन्हा॥**

समयकी सुहावनी गाली शोभित हो रही है। उसे सुनकर समाजसहित राजा दशरथजी हँस रहे हैं। इस रीतिसे सभीने भोजन किया और तब सबको आदरसहित आचमन (हाथ-मुँह धोनेके लिये जल) दिया गया॥ ४॥

**दो०—देइ पान पूजे जनक दसरथु सहित समाज।**
**जनवासेहि गवने मुदित सकल भूप सिरताज॥ ३२९॥**

फिर पान देकर जनकजीने समाजसहित दशरथजीका पूजन किया। सब राजाओंके सिरमौर (चक्रवर्ती) श्रीदशरथजी प्रसन्न होकर जनवासेको चले॥ ३२९॥

**नित नूतन मंगल पुर माहीं। निमिष सरिस दिन जामिनि जाहीं॥**
**बड़े भोर भूपतिमनि जागे। जाचक गुन गन गावन लागे॥**

जनकपुरमें नित्य नये मङ्गल हो रहे हैं। दिन और रात पलके समान बीत जाते हैं। बड़े सबेरे राजाओंके मुकुटमणि दशरथजी जागे। याचक उनके गुणसमूहका गान करने लगे॥ १॥

**देखि कुअँर बर बधुन्ह समेता। किमि कहि जात मोदु मन जेता॥**
**प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं। महा प्रमोदु प्रेमु मन माहीं॥**

चारों कुमारोंको सुन्दर वधुओंसहित देखकर उनके मनमें जितना आनन्द है, वह किस प्रकार कहा जा सकता है? वे प्रात:क्रिया करके गुरु वसिष्ठजीके पास गये। उनके मनमें महान् आनन्द और प्रेम भरा है॥ २॥

**करि प्रनामु पूजा कर जोरी। बोले गिरा अमिअँ जनु बोरी॥**
**तुम्हरी कृपाँ सुनहु मुनिराजा। भयउँ आजु मैं पूरनकाजा॥**

राजा प्रणाम और पूजन करके, फिर हाथ जोड़कर मानो अमृतमें डुबोयी हुई वाणी बोले—हे मुनिराज! सुनिये, आपकी कृपासे आज मैं पूर्णकाम हो गया॥ ३॥

**अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं। देहु धेनु सब भाँति बनाईं॥**
**सुनि गुर करि महिपाल बड़ाई। पुनि पठए मुनिबृंद बोलाईं॥**

हे स्वामिन्! अब सब ब्राह्मणोंको बुलाकर उनको सब तरह [गहनों-कपड़ों] से सजी हुई गायें दीजिये। यह सुनकर गुरुजीने राजाकी बड़ाई करके फिर मुनिगणोंको बुलवा भेजा॥ ४॥

**दो०—बामदेउ अरु देवरिषि बालमीकि जाबालि।**
**आए मुनिबर निकर तब कौसिकादि तपसालि॥ ३३०॥**

तब वामदेव, देवर्षि नारद, वाल्मीकि, जाबालि और विश्वामित्र आदि तपस्वी श्रेष्ठ मुनियोंके समूह-के-समूह आये॥ ३३०॥

**दंड प्रनाम सबहि नृप कीन्हे। पूजि सप्रेम बरासन दीन्हे॥**
**चारि लच्छ बर धेनु मगाईं। काम सुरभि सम सील सुहाईं॥**

राजाने सबको दण्डवत् प्रणाम किया और प्रेमसहित पूजन करके उन्हें उत्तम आसन दिये। चार लाख उत्तम गायें मँगवायीं, जो कामधेनुके समान अच्छे स्वभाववाली और सुहावनी थीं॥ १॥

**सब बिधि सकल अलंकृत कीन्ही। मुदित महिप महिदेवन्ह दीन्ही॥**
**करत बिनय बहु बिधि नरनाहू। लहेउँ आजु जगजीवन लाहू॥**

उन सबको सब प्रकारसे [गहनों-कपड़ोंसे] सजाकर राजाने प्रसन्न होकर भूदेव ब्राह्मणोंको दिया। राजा बहुत तरहसे विनती कर रहे हैं कि जगत्में मैंने आज ही जीनेका लाभ पाया॥ २॥

**पाइ असीस महीसु अनंदा। लिए बोलि पुनि जाचक बृंदा॥**
**कनक बसन मनि हय गय स्यंदन। दिए बूझि रुचि रबिकुलनंदन॥**

[ब्राह्मणोंसे] आशीर्वाद पाकर राजा आनन्दित हुए। फिर याचकोंके समूहोंको बुलवा लिया और सबको उनकी रुचि पूछकर सोना, वस्त्र, मणि, घोड़ा, हाथी और रथ (जिसने जो चाहा सो) सूर्यकुलको आनन्दित करनेवाले दशरथजीने दिये॥ ३॥

**चले पढ़त गावत गुन गाथा। जय जय जय दिनकर कुल नाथा॥**
**एहि बिधि राम बिआह उछाहू। सकइ न बरनि सहस मुख जाहू॥**

वे सब गुणानुवाद गाते और 'सूर्यकुलके स्वामीकी जय हो, जय हो, जय हो' कहते हुए चले। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके विवाहका उत्सव हुआ। जिन्हें सहस्र मुख हैं वे शेषजी भी उसका वर्णन नहीं कर सकते॥ ४॥

**दो०—बार बार कौसिक चरन सीसु नाइ कह राउ।**
**यह सबु सुखु मुनिराज तव कृपा कटाच्छ पसाउ॥ ३३१॥**

बार-बार विश्वामित्रजीके चरणोंमें सिर नवाकर राजा कहते हैं—हे मुनिराज! यह सब सुख आपके ही कृपाकटाक्षका प्रसाद है॥ ३३१॥

**जनक सनेहु सीलु करतूती। नृपु सब भाँति सराह बिभूती॥**
**दिन उठि बिदा अवधपति मागा। राखहिं जनकु सहित अनुरागा॥**

राजा दशरथजी जनकजीके स्नेह, शील, करनी और ऐश्वर्यकी सब प्रकारसे सराहना करते हैं। प्रतिदिन [सबेरे] उठकर अयोध्यानरेश विदा माँगते हैं। पर जनकजी उन्हें प्रेमसे रख लेते हैं॥ १॥

**नित नूतन आदरु अधिकाई। दिन प्रति सहस भाँति पहुनाई॥**
**नित नव नगर अनंद उछाहू। दसरथ गवनु सोहाइ न काहू॥**

आदर नित्य नया बढ़ता जाता है। प्रतिदिन हजारों प्रकारसे मेहमानी होती है। नगरमें नित्य नया आनन्द और उत्साह रहता है, दशरथजीका जाना किसीको नहीं सुहाता॥ २॥

**बहुत दिवस बीते एहि भाँती। जनु सनेह रजु बँधे बराती॥**
**कौसिक सतानंद तब जाई। कहा बिदेह नृपहि समुझाई॥**

इस प्रकार बहुत दिन बीत गये, मानो बराती स्नेहकी रस्सीसे बँध गये हैं। तब विश्वामित्रजी और शतानन्दजीने जाकर राजा जनकको समझाकर कहा—॥ ३॥

**अब दसरथ कहँ आयसु देहू। जद्यपि छाड़ि न सकहु सनेहू॥**
**भलेहिं नाथ कहि सचिव बोलाए। कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए॥**

यद्यपि आप स्नेह [वश उन्हें] नहीं छोड़ सकते, तो भी अब दशरथजीको आज्ञा दीजिये। 'हे नाथ! बहुत अच्छा' कहकर जनकजीने मन्त्रियोंको बुलवाया। वे आये और 'जय जीव' कहकर उन्होंने मस्तक नवाया॥ ४॥

**दो०—अवधनाथु चाहत चलन भीतर करहु जनाउ।**
**भए प्रेमबस सचिव सुनि बिप्र सभासद राउ॥ ३३२॥**

[जनकजीने कहा—] अयोध्यानाथ चलना चाहते हैं, भीतर (रनिवासमें) खबर कर दो। यह सुनकर मन्त्री, ब्राह्मण, सभासद और राजा जनक भी प्रेमके वश हो गये॥ ३३२॥

**पुरबासी सुनि चलिहि बराता। बूझत बिकल परस्पर बाता॥**
**सत्य गवनु सुनि सब बिलखाने। मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने॥**

जनकपुरवासियोंने सुना कि बारात जायगी, तब वे व्याकुल होकर एक-दूसरेसे बात पूछने लगे। जाना सत्य है, यह सुनकर सब ऐसे उदास हो गये मानो सन्ध्याके समय कमल सकुचा गये हों॥ १॥

**जहँ जहँ आवत बसे बराती। तहँ तहँ सिद्ध चला बहु भाँती॥**
**बिबिध भाँति मेवा पकवाना। भोजन साजु न जाइ बखाना॥**

आते समय जहाँ-जहाँ बराती ठहरे थे, वहाँ-वहाँ बहुत प्रकारका सीधा (रसोईका सामान) भेजा गया। अनेकों प्रकारके मेवे, पकवान और भोजनकी सामग्री जो बखानी नहीं जा सकती—॥ २॥

**भरि भरि बसहँ अपार कहारा। पठईं जनक अनेक सुसारा॥**
**तुरग लाख रथ सहस पचीसा। सकल सँवारे नख अरु सीसा॥**

अनगिनत बैलों और कहारोंपर भर-भरकर (लाद-लादकर) भेजी गयी। साथ ही जनकजीने अनेकों सुन्दर शय्याएँ (पलँग) भेजीं। एक लाख घोड़े और पचीस हजार रथ सब नखसे शिखातक (ऊपरसे नीचेतक) सजाये हुए॥ ३॥

**मत्त सहस दस सिंधुर साजे। जिन्हहि देखि दिसिकुंजर लाजे॥**
**कनक बसन मनि भरि भरि जाना। महिषीं धेनु बस्तु बिधि नाना॥**

दस हजार सजे हुए मतवाले हाथी, जिन्हें देखकर दिशाओंके हाथी भी लजा जाते हैं, गाड़ियोंमें भर-भरकर सोना, वस्त्र और रत्न (जवाहिरात) और भैंस, गाय तथा और भी नाना प्रकारकी चीजें दीं॥ ४॥

**दो०—दाइज अमित न सकिअ कहि दीन्ह बिदेहँ बहोरि।**
**जो अवलोकत लोकपति लोक संपदा थोरि॥ ३३३॥**

[इस प्रकार] जनकजीने फिरसे अपरिमित दहेज दिया, जो कहा नहीं जा सकता और जिसे देखकर लोकपालोंके लोकोंकी सम्पदा भी थोड़ी जान पड़ती थी॥ ३३३॥

**सबु समाजु एहि भाँति बनाई। जनक अवधपुर दीन्ह पठाई॥**
**चलिहि बरात सुनत सब रानीं। बिकल मीनगन जनु लघु पानीं॥**

इस प्रकार सब सामान सजाकर राजा जनकने अयोध्यापुरीको भेज दिया। बारात चलेगी, यह सुनते ही सब रानियाँ ऐसी विकल हो गयीं, मानो थोड़े जलमें मछलियाँ छटपटा रही हों॥ १॥

**पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं। देइ असीस सिखावनु देहीं॥**
**होएहु संतत पियहि पिआरी। चिरु अहिबात असीस हमारी॥**

वे बार-बार सीताजीको गोद कर लेती हैं और आशीर्वाद देकर सिखावन देती हैं—तुम सदा अपने पतिकी प्यारी होओ, तुम्हारा सोहाग अचल हो; हमारी यही आशिष है॥ २॥

**सासु ससुर गुर सेवा करेहू। पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू॥**
**अति सनेह बस सखीं सयानी। नारि धरम सिखवहिं मृदु बानी॥**

सास, ससुर और गुरुकी सेवा करना। पतिका रुख देखकर उनकी आज्ञाका पालन करना। सयानी सखियाँ अत्यन्त स्नेहके वश कोमल वाणीसे स्त्रियोंके धर्म सिखलाती हैं॥ ३॥

**सादर सकल कुअँरि समुझाईं। रानिन्ह बार बार उर लाईं॥**
**बहुरि बहुरि भेटहिं महतारीं। कहहिं बिरंचि रचीं कत नारीं॥**

आदरके साथ सब पुत्रियोंको [स्त्रियोंके धर्म] समझाकर रानियोंने बार-बार उन्हें हृदयसे लगाया। माताएँ फिर-फिर भेंटती और कहती हैं कि ब्रह्माने स्त्रीजातिको क्यों रचा॥ ४॥

**दो०—तेहि अवसर भाइन्ह सहित रामु भानु कुल केतु।**
**चले जनक मंदिर मुदित बिदा करावन हेतु॥ ३३४॥**

उसी समय सूर्यवंशके पताकास्वरूप श्रीरामचन्द्रजी भाइयोंसहित प्रसन्न होकर विदा करानेके लिये जनकजीके महलको चले॥ ३३४॥

**चारिउ भाइ सुभायँ सुहाए। नगर नारि नर देखन धाए॥**
**कोउ कह चलन चहत हहिं आजू। कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू॥**

स्वभावसे ही सुन्दर चारों भाइयोंको देखनेके लिये नगरके स्त्री-पुरुष दौड़े। कोई कहता है—आज ये जाना चाहते हैं। विदेहने विदाईका सब सामान तैयार कर लिया है॥ १॥

**लेहु नयन भरि रूप निहारी। प्रिय पाहुने भूप सुत चारी॥**
**को जानै केहिं सुकृत सयानी। नयन अतिथि कीन्हे बिधि आनी॥**

राजाके चारों पुत्र, इन प्यारे मेहमानोंके [मनोहर] रूपको नेत्र भरकर देख लो। हे सयानी! कौन जाने, किस पुण्यसे विधाताने इन्हें यहाँ लाकर हमारे नेत्रोंका अतिथि किया है॥ २॥

**मरनसीलु जिमि पाव पिऊषा। सुरतरु लहै जनम कर भूखा॥**
**पाव नारकी हरिपदु जैसें। इन्ह कर दरसनु हम कहँ तैसें॥**

मरनेवाला जिस तरह अमृत पा जाय, जन्मका भूखा कल्पवृक्ष पा जाय और नरकमें रहनेवाला (या नरकके योग्य) जीव जैसे भगवान्‌के परमपदको प्राप्त हो जाय, हमारे लिये इनके दर्शन वैसे ही हैं॥ ३॥

**निरखि राम सोभा उर धरहू। निज मन फनि मूरति मनि करहू॥**
**एहि बिधि सबहि नयन फलु देता। गए कुअँर सब राज निकेता॥**

श्रीरामचन्द्रजीकी शोभाको निरखकर हृदयमें धर लो। अपने मनको साँप और इनकी मूर्तिको मणि बना लो। इस प्रकार सबको नेत्रोंका फल देते हुए सब राजकुमार राजमहलमें गये॥ ४॥

**दो०—रूप सिंधु सब बंधु लखि हरषि उठा रनिवासु।**
**करहिं निछावरि आरती महा मुदित मन सासु॥ ३३५॥**

रूपके समुद्र सब भाइयोंको देखकर सारा रनिवास हर्षित हो उठा। सासुएँ महान् प्रसन्न मनसे निछावर और आरती करती हैं॥ ३३५॥

**देखि राम छबि अति अनुरागीं। प्रेमबिबस पुनि पुनि पद लागीं॥**
**रही न लाज प्रीति उर छाई। सहज सनेहु बरनि किमि जाई॥**

श्रीरामचन्द्रजीकी छबि देखकर वे प्रेममें अत्यन्त मग्न हो गयीं और प्रेमके विशेष वश होकर बार-बार चरणों लगीं। हृदयमें प्रीति छा गयी, इससे लज्जा नहीं रह गयी। उनके स्वाभाविक स्नेहका वर्णन किस तरह किया जा सकता है॥ १॥

**भाइन्ह सहित उबटि अन्हवाए। छरस असन अति हेतु जेवाँए॥**
**बोले रामु सुअवसरु जानी। सील सनेह सकुचमय बानी॥**

उन्होंने भाइयोंसहित श्रीरामजीको उबटन करके स्नान कराया और बड़े प्रेमसे षट्रस भोजन कराया। सुअवसर जानकर श्रीरामचन्द्रजी शील, स्नेह और संकोचभरी वाणी बोले—॥ २॥

**राउ अवधपुर चहत सिधाए। बिदा होन हम इहाँ पठाए॥**
**मातु मुदित मन आयसु देहू। बालक जानि करब नित नेहू॥**

महाराज अयोध्यापुरीको चलना चाहते हैं, उन्होंने हमें विदा होनेके लिये यहाँ भेजा है। हे माता! प्रसन्न मनसे आज्ञा दीजिये और हमें अपने बालक जानकर सदा स्नेह बनाये रखियेगा॥ ३॥

**सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू। बोलि न सकहिं प्रेमबस सासू॥**
**हृदयँ लगाइ कुअँरि सब लीन्ही। पतिन्ह सौंपि बिनती अति कीन्ही॥**

इन वचनोंको सुनते ही रनिवास उदास हो गया। सासुएँ प्रेमवश बोल नहीं सकतीं। उन्होंने सब कुमारियोंको हृदयसे लगा लिया और उनके पतियोंको सौंपकर बहुत विनती की॥ ४॥

**छं०—करि बिनय सिय रामहि समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहै।**
**बलि जाउँ तात सुजान तुम्ह कहुँ बिदित गति सब की अहै॥**
**परिवार पुरजन मोहि राजहि प्रानप्रिय सिय जानिबी।**
**तुलसीस सीलु सनेहु लखि निज किंकरी करि मानिबी॥**

विनती करके उन्होंने सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीको समर्पित किया और हाथ जोड़कर बार-बार कहा—हे तात! हे सुजान! मैं बलि जाती हूँ, तुमको सबकी गति (हाल) मालूम है। परिवारको, पुरवासियोंको, मुझको और राजाको सीता प्राणोंके समान प्रिय है, ऐसा जानियेगा। हे तुलसीके स्वामी! इसके शील और स्नेहको देखकर इसे अपनी दासी करके मानियेगा।

**सो०—तुम्ह परिपूरन काम जान सिरोमनि भावप्रिय।**
**जन गुन गाहक राम दोष दलन करुनायतन॥ ३३६॥**

तुम पूर्णकाम हो, सुजानशिरोमणि हो और भावप्रिय हो (तुम्हें प्रेम प्यारा है)। हे राम! तुम भक्तोंके गुणोंको ग्रहण करनेवाले, दोषोंको नाश करनेवाले और दयाके धाम हो॥ ३३६॥

**अस कहि रही चरन गहि रानी। प्रेम पंक जनु गिरा समानी॥**
**सुनि सनेहसानी बर बानी। बहुबिधि राम सासु सनमानी॥**

ऐसा कहकर रानी चरणोंको पकड़कर[चुप] रह गयीं। मानो उनकी वाणी प्रेमरूपी दलदलमें समा गयी हो। स्नेहसे सनी हुई श्रेष्ठ वाणी सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने सासका बहुत प्रकारसे सम्मान किया॥ १॥

**राम बिदा मागत कर जोरी। कीन्ह प्रनामु बहोरि बहोरी॥**
**पाइ असीस बहुरि सिरु नाई। भाइन्ह सहित चले रघुराई॥**

तब श्रीरामचन्द्रजीने हाथ जोड़कर विदा माँगते हुए बार-बार प्रणाम किया। आशीर्वाद पाकर और फिर सिर नवाकर भाइयोंसहित श्रीरघुनाथजी चले॥ २॥

**मंजु मधुर मूरति उर आनी। भईं सनेह सिथिल सब रानी॥**
**पुनि धीरजु धरि कुअँरि हँकारीं। बार बार भेटहिं महतारीं॥**

श्रीरामजीकी सुन्दर मधुर मूर्तिको हृदयमें लाकर सब रानियाँ स्नेहसे शिथिल हो गयीं। फिर धीरज धारण करके कुमारियोंको बुलाकर माताएँ बारंबार उन्हें [गले लगाकर] भेंटने लगीं॥ ३॥

**पहुँचावहिं फिरि मिलहिं बहोरी। बढ़ी परस्पर प्रीति न थोरी॥**
**पुनि पुनि मिलत सखिन्ह बिलगाई। बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई॥**

पुत्रियोंको पहुँचाती हैं, फिर लौटकर मिलती हैं। परस्परमें कुछ थोड़ी प्रीति नहीं बढ़ी (अर्थात् बहुत प्रीति बढ़ी)। बार-बार मिलती हुई माताओंको सखियोंने अलग कर दिया। जैसे हालकी ब्यायी हुई गायको कोई उसके बालक बछड़े [या बछिया] से अलग कर दे॥ ४॥

**दो०—प्रेमबिबस नर नारि सब सखिन्ह सहित रनिवासु।**
**मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर करुनाँ बिरहँ निवासु॥ ३३७॥**

सब स्त्री-पुरुष और सखियोंसहित सारा रनिवास प्रेमके विशेष वश हो रहा है। [ऐसा लगता है] मानो जनकपुरमें करुणा और विरहने डेरा डाल दिया है॥ ३३७॥

**सुक सारिका जानकी ज्याए। कनक पिंजरन्हि राखि पढ़ाए॥**
**ब्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही। सुनि धीरजु परिहरइ न केही॥**

जानकीने जिन तोता और मैनाको पाल-पोसकर बड़ा किया था और सोनेके पिंजड़ोंमें रखकर पढ़ाया था, वे व्याकुल होकर कह रहे हैं—वैदेही कहाँ हैं। उनके ऐसे वचनोंको सुनकर धीरज किसको नहीं त्याग देगा (अर्थात् सबका धैर्य जाता रहा)॥ १॥

**भए बिकल खग मृग एहि भाँती। मनुज दसा कैसें कहि जाती॥**
**बंधु समेत जनकु तब आए। प्रेम उमगि लोचन जल छाए॥**

जब पक्षी और पशुतक इस तरह विकल हो गये, तब मनुष्योंकी दशा कैसे कही जा सकती है! तब भाईसहित जनकजी वहाँ आये। प्रेमसे उमड़कर उनके नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया॥ २॥

**सीय बिलोकि धीरता भागी। रहे कहावत परम बिरागी॥**
**लीन्हि रायँ उर लाइ जानकी। मिटी महामरजाद ग्यान की॥**

वे परम वैराग्यवान् कहलाते थे; पर सीताजीको देखकर उनका भी धीरज भाग गया। राजाने जानकीजीको हृदयसे लगा लिया। [प्रेमके प्रभावसे] ज्ञानकी महान् मर्यादा मिट गयी (ज्ञानका बाँध टूट गया)॥ ३॥

**समुझावत सब सचिव सयाने। कीन्ह बिचारु न अवसर जाने॥**
**बारहिं बार सुता उर लाईं। सजि सुंदर पालकीं मगाईं॥**

सब बुद्धिमान् मन्त्री उन्हें समझाते हैं। तब राजाने विषाद करनेका समय न जानकर विचार किया। बारंबार पुत्रियोंको हृदयसे लगाकर सुन्दर सजी हुई पालकियाँ मँगवायी॥ ४॥

**दो०—प्रेमबिबस परिवारु सबु जानि सुलगन नरेस।**
**कुअँरि चढ़ाईं पालकिन्ह सुमिरे सिद्धि गनेस॥ ३३८॥**

सारा परिवार प्रेममें विवश है। राजाने सुन्दर मुहूर्त जानकर सिद्धिसहित गणेशजीका स्मरण करके कन्याओंको पालकियोंपर चढ़ाया॥ ३३८॥

**बहुबिधि भूप सुता समुझाईं। नारिधरमु कुलरीति सिखाईं॥**
**दासीं दास दिए बहुतेरे। सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे॥**

राजाने पुत्रियोंको बहुत प्रकारसे समझाया और उन्हें स्त्रियोंका धर्म और कुलकी रीति सिखायी। बहुत-से दासी-दास दिये, जो सीताजीके प्रिय और विश्वासपात्र सेवक थे॥ १॥

**सीय चलत ब्याकुल पुरबासी। होहिं सगुन सुभ मंगल रासी॥**
**भूसुर सचिव समेत समाजा। संग चले पहुँचावन राजा॥**

सीताजीके चलते समय जनकपुरवासी व्याकुल हो गये। मङ्गलकी राशि शुभ शकुन हो रहे हैं। ब्राह्मण और मन्त्रियोंके समाजसहित राजा जनकजी उन्हें पहुँचानेके लिये साथ चले॥ २॥

**समय बिलोकि बाजने बाजे। रथ गज बाजि बरातिन्ह साजे॥**
**दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे। दान मान परिपूरन कीन्हे॥**

समय देखकर बाजे बजने लगे। बरातियोंने रथ, हाथी और घोड़े सजाये। दशरथजीने सब ब्राह्मणोंको बुला लिया और उन्हें दान और सम्मानसे परिपूर्ण कर दिया॥ ३॥

**चरन सरोज धूरि धरि सीसा। मुदित महीपति पाइ असीसा॥**
**सुमिरि गजाननु कीन्ह पयाना। मंगलमूल सगुन भए नाना॥**

उनके चरणकमलोंकी धूलि सिरपर धरकर और आशिष पाकर राजा आनन्दित हुए और गणेशजीका स्मरण करके उन्होंने प्रस्थान किया। मङ्गलोंके मूल अनेकों शकुन हुए॥ ४॥

**दो०—सुर प्रसून बरषहिं हरषि करहिं अपछरा गान।**
**चले अवधपति अवधपुर मुदित बजाइ निसान॥ ३३९॥**

देवता हर्षित होकर फूल बरसा रहे हैं और अप्सराएँ गान कर रही हैं। अवधपति दशरथजी नगाड़े बजाकर आनन्दपूर्वक अयोध्यापुरीको चले॥ ३३९॥

**नृप करि बिनय महाजन फेरे। सादर सकल मागने टेरे॥**
**भूषन बसन बाजि गज दीन्हे। प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे॥**

राजा दशरथजीने विनती करके प्रतिष्ठित जनोंको लौटाया और आदरके साथ सब मंगनोंको बुलवाया। उनको गहने-कपड़े, घोड़े-हाथी दिये और प्रेमसे पुष्ट करके सबको सम्पन्न अर्थात् बलयुक्त कर दिया॥ १॥

**बार बार बिरिदावलि भाषी। फिरे सकल रामहि उर राखी॥**
**बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं। जनकु प्रेमबस फिरै न चहहीं॥**

वे सब बारंबार विरुदावली (कुलकीर्ति) बखानकर और श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें रखकर लौटे। कोसलाधीश दशरथजी बार-बार लौटनेको कहते हैं, परन्तु जनकजी प्रेमवश लौटना नहीं चाहते॥ २॥

**पुनि कह भूपति बचन सुहाए। फिरिअ महीस दूरि बड़ि आए॥**
**राउ बहोरि उतरि भए ठाढ़े। प्रेम प्रबाह बिलोचन बाढ़े॥**

दशरथजीने फिर सुहावने वचन कहे—हे राजन्! बहुत दूर आ गये, अब लौटिये। फिर राजा दशरथजी रथसे उतरकर खड़े हो गये। उनके नेत्रोंमें प्रेमका प्रवाह बढ़ आया (प्रेमाश्रुओंकी धारा बह चली)॥ ३॥

**तब बिदेह बोले कर जोरी। बचन सनेह सुधाँ जनु बोरी॥**
**करौं कवन बिधि बिनय बनाई। महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई॥**

तब जनकजी हाथ जोड़कर मानो स्नेहरूपी अमृतमें डुबोकर वचन बोले—मैं किस तरह बनाकर (किन शब्दोंमें) विनती करूँ। हे महाराज! आपने मुझे बड़ी बड़ाई दी है॥ ४॥

**दो०—कोसलपति समधी सजन सनमाने सब भाँति।**
**मिलनि परसपर बिनय अति प्रीति न हृदयँ समाति॥ ३४०॥**

अयोध्यानाथ दशरथजीने अपने स्वजन समधीका सब प्रकारसे सम्मान किया। उनके आपसके मिलनेमें अत्यन्त विनय थी और इतनी प्रीति थी जो हृदयमें समाती न थी॥ ३४०॥

**मुनि मंडलिहि जनक सिरु नावा। आसिरबादु सबहि सन पावा॥**
**सादर पुनि भेंटे जामाता। रूप सील गुन निधि सब भ्राता॥**

जनकजीने मुनिमण्डलीको सिर नवाया और सभीसे आशीर्वाद पाया। फिर आदरके साथ वे रूप, शील और गुणोंके निधान सब भाइयोंसे—अपने दामादोंसे मिले;॥ १॥

**जोरि पंकरुह पानि सुहाए। बोले बचन प्रेम जनु जाए॥**
**राम करौं केहि भाँति प्रसंसा। मुनि महेस मन मानस हंसा॥**

और सुन्दर कमलके समान हाथोंको जोड़कर ऐसे वचन बोले जो मानो प्रेमसे ही जन्मे हों। हे रामजी! मैं किस प्रकार आपकी प्रशंसा करूँ! आप मुनियों और महादेवजीके मनरूपी मानसरोवरके हंस हैं॥ २॥

**करहिं जोग जोगी जेहि लागी। कोहु मोहु ममता मदु त्यागी॥**
**ब्यापकु ब्रह्मु अलखु अबिनासी। चिदानंदु निरगुन गुनरासी॥**

योगी लोग जिनके लिये क्रोध, मोह, ममता और मदको त्यागकर योगसाधन करते हैं, जो सर्वव्यापक, ब्रह्म, अव्यक्त, अविनाशी, चिदानन्द, निर्गुण और गुणोंकी राशि हैं,॥ ३॥

**मन समेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहिं सकल अनुमानी॥**
**महिमा निगमु नेति कहि कहई। जो तिहुँ काल एकरस रहई॥**

जिनको मनसहित वाणी नहीं जानती और सब जिनका अनुमान ही करते हैं, कोई तर्कना नहीं कर सकते; जिनकी महिमाको वेद 'नेति' कहकर वर्णन करता है और जो [सच्चिदानन्द] तीनों कालोंमें एकरस (सर्वदा और सर्वथा निर्विकार) रहते हैं;॥ ४॥

**दो०—नयन बिषय मो कहुँ भयउ सो समस्त सुख मूल।**
**सबइ लाभु जग जीव कहँ भएँ ईसु अनुकूल॥ ३४१॥**

वे ही समस्त सुखोंके मूल [आप] मेरे नेत्रोंके विषय हुए। ईश्वरके अनुकूल होनेपर जगत्में जीवको सब लाभ-ही-लाभ है॥ ३४१॥

**सबहि भाँति मोहि दीन्हि बड़ाई। निज जन जानि लीन्ह अपनाई॥**
**होहिं सहस दस सारद सेषा। करहिं कलप कोटिक भरि लेखा॥**

आपने मुझे सभी प्रकारसे बड़ाई दी और अपना जन जानकर अपना लिया। यदि दस हजार सरस्वती और शेष हों और करोड़ों कल्पोंतक गणना करते रहें॥ १॥

**मोर भाग्य राउर गुन गाथा। कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा॥**
**मैं कछु कहउँ एक बल मोरें। तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरें॥**

तो भी हे रघुनाथजी! सुनिये, मेरे सौभाग्य और आपके गुणोंकी कथा कहकर समाप्त नहीं की जा सकती। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह अपने इस एक ही बलपर कि आप अत्यन्त थोड़े प्रेमसे प्रसन्न हो जाते हैं॥ २॥

**बार बार मागउँ कर जोरें। मनु परिहरै चरन जनि भोरें॥**
**सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे। पूरनकाम रामु परितोषे॥**

मैं बार-बार हाथ जोड़कर यह माँगता हूँ कि मेरा मन भूलकर भी आपके चरणोंको न छोड़े। जनकजीके श्रेष्ठ वचनोंको सुनकर, जो मानो प्रेमसे पुष्ट किये हुए थे, पूर्णकाम श्रीरामचन्द्रजी सन्तुष्ट हुए॥ ३॥

**करि बर बिनय ससुर सनमाने। पितु कौसिक बसिष्ठ सम जाने॥**
**बिनती बहुरि भरत सन कीन्ही। मिलि सप्रेम पुनि आसिष दीन्ही॥**

उन्होंने सुन्दर विनती करके पिता दशरथजी, गुरु विश्वामित्रजी और कुलगुरु वसिष्ठजीके समान जानकर ससुर जनकजीका सम्मान किया। फिर जनकजीने भरतजीसे विनती की और प्रेमके साथ मिलकर फिर उन्हें आशीर्वाद दिया॥ ४॥

**दो०—मिले लखन रिपुसूदनहि दीन्हि असीस महीस।**
**भए परसपर प्रेमबस फिरि फिरि नावहिं सीस॥ ३४२॥**

फिर राजाने लक्ष्मणजी और शत्रुघ्नजीसे मिलकर उन्हें आशीर्वाद दिया। वे परस्पर प्रेमके वश होकर बार-बार आपसमें सिर नवाने लगे॥ ३४२॥

**बार बार करि बिनय बड़ाई। रघुपति चले संग सब भाई॥**
**जनक गहे कौसिक पद जाई। चरन रेनु सिर नयनन्ह लाई॥**

जनकजीकी बार-बार विनती और बड़ाई करके श्रीरघुनाथजी सब भाइयोंके साथ चले। जनकजीने जाकर विश्वामित्रजीके चरण पकड़ लिये और उनके चरणोंकी रजको सिर और नेत्रोंमें लगाया॥ १॥

**सुनु मुनीस बर दरसन तोरें। अगमु न कछु प्रतीति मन मोरें॥**
**जो सुखु सुजसु लोकपति चहहीं। करत मनोरथ सकुचत अहहीं॥**

[उन्होंने कहा—] हे मुनीश्वर! सुनिये, आपके सुन्दर दर्शनसे कुछ भी दुर्लभ नहीं है, मेरे मनमें ऐसा विश्वास है। जो सुख और सुयश लोकपाल चाहते हैं; परन्तु [असम्भव समझकर] जिसका मनोरथ करते हुए सकुचाते हैं,॥ २॥

**सो सुखु सुजसु सुलभ मोहि स्वामी। सब सिधि तव दरसन अनुगामी॥**
**कीन्हि बिनय पुनि पुनि सिरु नाई। फिरे महीसु आसिषा पाई॥**

हे स्वामी! वही सुख और सुयश मुझे सुलभ हो गया; सारी सिद्धियाँ आपके दर्शनोंकी अनुगामिनी अर्थात् पीछे-पीछे चलनेवाली हैं। इस प्रकार बार-बार विनती की और सिर नवाकर तथा उनसे आशीर्वाद पाकर राजा जनक लौटे॥ ३॥

**चली बरात निसान बजाई। मुदित छोट बड़ सब समुदाई॥**
**रामहि निरखि ग्राम नर नारी। पाइ नयन फलु होहिं सुखारी॥**

डंका बजाकर बारात चली। छोटे-बड़े सभी समुदाय प्रसन्न हैं। [रास्तेके] गाँवोंके स्त्री-पुरुष श्रीरामचन्द्रजीको देखकर नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते हैं॥ ४॥

**दो०—बीच बीच बर बास करि मग लोगन्ह सुख देत।**
**अवध समीप पुनीत दिन पहुँची आइ जनेत॥ ३४३॥**

बीच-बीचमें सुन्दर मुकाम करती हुई तथा मार्गके लोगोंको सुख देती हुई वह बारात पवित्र दिनमें अयोध्यापुरीके समीप आ पहुँची॥ ३४३॥

**हने निसान पनव बर बाजे। भेरि संख धुनि हय गय गाजे॥**
**झाँझि बिरव डिंडिमी सुहाई। सरस राग बाजहिं सहनाई॥**

नगाड़ोंपर चोटें पड़ने लगीं; सुन्दर ढोल बजने लगे। भेरी और शङ्खकी बड़ी आवाज हो रही है; हाथी-घोड़े गरज रहे हैं। विशेष शब्द करनेवाली झाँझें, सुहावनी डफलियाँ तथा रसीले रागसे शहनाइयाँ बज रही हैं॥ १॥

**पुर जन आवत अकनि बराता। मुदित सकल पुलकावलि गाता॥**
**निज निज सुंदर सदन सँवारे। हाट बाट चौहट पुर द्वारे॥**

बारातको आती हुई सुनकर नगरनिवासी प्रसन्न हो गये। सबके शरीरोंपर पुलकावली छा गयी। सबने अपने-अपने सुन्दर घरों, बाजारों, गलियों, चौराहों और नगरके द्वारोंको सजाया॥ २॥

**गलीं सकल अरगजाँ सिंचाईं। जहँ तहँ चौकें चारु पुराईं॥**
**बना बजारु न जाइ बखाना। तोरन केतु पताक बिताना॥**

सारी गलियाँ अरगजेसे सिंचायी गयीं, जहाँ-तहाँ सुन्दर चौक पुराये गये। तोरणों, ध्वजा-पताकाओं और मण्डपोंसे बाजार ऐसा सजा कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता॥ ३॥

**सफल पूगफल कदलि रसाला। रोपे बकुल कदंब तमाला॥**
**लगे सुभग तरु परसत धरनी। मनिमय आलबाल कल करनी॥**

फलसहित सुपारी, केला, आम, मौलसिरी, कदम्ब और तमालके वृक्ष लगाये गये। वे लगे हुए सुन्दर वृक्ष [फलोंके भारसे] पृथ्वीको छू रहे हैं। उनके मणियोंके थाले बड़ी सुन्दर कारीगरीसे बनाये गये हैं॥ ४॥

**दो०—बिबिध भाँति मंगल कलस गृह गृह रचे सँवारि।**
**सुर ब्रह्मादि सिहाहिं सब रघुबर पुरी निहारि॥ ३४४॥**

अनेक प्रकारके मङ्गल-कलश घर-घर सजाकर बनाये गये हैं। श्रीरघुनाथजीकी पुरी (अयोध्या)को देखकर ब्रह्मा आदि सब देवता सिहाते हैं॥ ३४४॥

**भूप भवनु तेहि अवसर सोहा। रचना देखि मदन मनु मोहा॥**
**मंगल सगुन मनोहरताई। रिधि सिधि सुख संपदा सुहाई॥**

उस समय राजमहल [अत्यन्त] शोभित हो रहा था। उसकी रचना देखकर कामदेवका भी मन मोहित हो जाता था। मङ्गल शकुन, मनोहरता, ऋद्धि-सिद्धि, सुख, सुहावनी सम्पत्ति॥ १॥

**जनु उछाह सब सहज सुहाए। तनु धरि धरि दसरथ गृहँ छाए॥**
**देखन हेतु राम बैदेही। कहहु लालसा होहि न केही॥**

और सब प्रकारके उत्साह (आनन्द) मानो सहज सुन्दर शरीर धर-धरकर दशरथजीके घरमें छा गये हैं। श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके दर्शनोंके लिये भला कहिये किसे लालसा न होगी?॥ २॥

**जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि। निज छबि निदरहिं मदन बिलासिनि॥**
**सकल सुमंगल सजें आरती। गावहिं जनु बहु बेष भारती॥**

सुहागिनी स्त्रियाँ झुंड-की-झुंड मिलकर चलीं, जो अपनी छबिसे कामदेवकी स्त्री रतिका भी निरादर कर रही हैं। सभी सुन्दर मङ्गलद्रव्य एवं आरती सजाये हुए गा रही हैं, मानो सरस्वतीजी ही बहुत-से वेष धारण किये गा रही हों॥ ३॥

**भूपति भवन कोलाहलु होई। जाइ न बरनि समउ सुखु सोई॥**
**कौसल्यादि राम महतारीं। प्रेमबिबस तन दसा बिसारीं॥**

राजमहलमें [आनन्दके मारे] शोर मच रहा है। उस समयका और सुखका वर्णन नहीं किया जा सकता। कौसल्याजी आदि श्रीरामचन्द्रजीकी सब माताएँ प्रेमके विशेष वश होनेसे शरीरकी सुध भूल गयीं॥ ४॥

**दो०—दिए दान बिप्रन्ह बिपुल पूजि गनेस पुरारि।**
**प्रमुदित परम दरिद्र जनु पाइ पदारथ चारि॥ ३४५॥**

गणेशजी और त्रिपुरारि शिवजीका पूजन करके उन्होंने ब्राह्मणोंको बहुत-सा दान दिया। वे ऐसी परम प्रसन्न हुईं, मानो अत्यन्त दरिद्री चारों पदार्थ पा गया हो॥ ३४५॥

**मोद प्रमोद बिबस सब माता। चलहिं न चरन सिथिल भए गाता॥**
**राम दरस हित अति अनुरागीं। परिछनि साजु सजन सब लागीं॥**

सुख और महान् आनन्दसे विवश होनेके कारण सब माताओंके शरीर शिथिल हो गये हैं, उनके चरण चलते नहीं हैं। श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनोंके लिये वे अत्यन्त अनुरागमें भरकर परछनका सब सामान सजाने लगीं॥ १॥

**बिबिध बिधान बाजने बाजे। मंगल मुदित सुमित्राँ साजे॥**
**हरद दूब दधि पल्लव फूला। पान पूगफल मंगल मूला॥**

अनेकों प्रकारके बाजे बजते थे। सुमित्राजीने आनन्दपूर्वक मङ्गल साज सजाये। हल्दी, दूब, दही, पत्ते, फूल, पान और सुपारी आदि मङ्गलकी मूल वस्तुएँ॥ २॥

**अच्छत अंकुर लोचन लाजा। मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा॥**
**छुहे पुरट घट सहज सुहाए। मदन सकुन जनु नीड़ बनाए॥**

तथा अक्षत (चावल), अँखुए, गोरोचन, लावा और तुलसीकी सुन्दर मंजरियाँ सुशोभित हैं। नाना रंगोंसे चित्रित किये हुए सहज सुहावने सुवर्णके कलश ऐसे मालूम होते हैं, मानो कामदेवके पक्षियोंने घोंसले बनाये हों॥ ३॥

**सगुन सुगंध न जाहिं बखानी। मंगल सकल सजहिं सब रानी॥**
**रचीं आरतीं बहुत बिधाना। मुदित करहिं कल मंगल गाना॥**

शकुनकी सुगन्धित वस्तुएँ बखानी नहीं जा सकतीं। सब रानियाँ सम्पूर्ण मङ्गल साज सज रही हैं। बहुत प्रकारकी आरती बनाकर वे आनन्दित हुईं सुन्दर मङ्गलगान कर रही हैं॥ ४॥

**दो०—कनक थार भरि मंगलन्हि कमल करन्हि लिएँ मात।**
**चलीं मुदित परिछनि करन पुलक पल्लवित गात॥ ३४६॥**

सोनेके थालोंको माङ्गलिक वस्तुओंसे भरकर अपने कमलके समान (कोमल) हाथोंमें लिये हुए माताएँ आनन्दित होकर परछन करने चलीं। उनके शरीर पुलकावलीसे छा गये हैं॥ ३४६॥

**धूप धूम नभु मेचक भयऊ। सावन घन घमंडु जनु ठयऊ॥**
**सुरतरु सुमन माल सुर बरषहिं। मनहुँ बलाक अवलि मनु करषहिं॥**

धूपके धूएँसे आकाश ऐसा काला हो गया है मानो सावनके बादल घुमड़-घुमड़कर छा गये हों। देवता कल्पवृक्षके फूलोंकी मालाएँ बरसा रहे हैं। वे ऐसी लगती हैं मानो बगुलोंकी पाँति मनको [अपनी ओर] खींच रही हो॥ १॥

**मंजुल मनिमय बंदनिवारे। मनहुँ पाकरिपु चाप सँवारे॥**
**प्रगटहिं दुरहिं अटन्ह पर भामिनि। चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि॥**

सुन्दर मणियोंसे बने बंदनवार ऐसे मालूम होते हैं मानो इन्द्रधनुष सजाये हों। अटारियोंपर सुन्दर और चपल स्त्रियाँ प्रकट होती और छिप जाती हैं (आती-जाती हैं); वे ऐसी जान पड़ती हैं मानो बिजलियाँ चमक रही हों॥ २॥

**दुंदुभि धुनि घन गरजनि घोरा। जाचक चातक दादुर मोरा॥**
**सुर सुगंध सुचि बरषहिं बारी। सुखी सकल ससि पुर नर नारी॥**

नगाड़ोंकी ध्वनि मानो बादलोंकी घोर गर्जना है। याचकगण पपीहे, मेढक और मोर हैं। देवता पवित्र सुगन्धरूपी जल बरसा रहे हैं, जिससे खेतीके समान नगरके सब स्त्री-पुरुष सुखी हो रहे हैं॥ ३॥

**समउ जानि गुर आयसु दीन्हा। पुर प्रबेसु रघुकुलमनि कीन्हा॥**
**सुमिरि संभु गिरिजा गनराजा। मुदित महीपति सहित समाजा॥**

[प्रवेशका] समय जानकर गुरु वसिष्ठजीने आज्ञा दी। तब रघुकुलमणि महाराज दशरथजीने शिवजी, पार्वतीजी और गणेशजीका स्मरण करके समाजसहित आनन्दित होकर नगरमें प्रवेश किया॥ ४॥

**दो०—होहिं सगुन बरषहिं सुमन सुर दुंदुभीं बजाइ।**
**बिबुध बधू नाचहिं मुदित मंजुल मंगल गाइ॥ ३४७॥**

शकुन हो रहे हैं, देवता दुन्दुभी बजा-बजाकर फूल बरसा रहे हैं। देवताओंकी स्त्रियाँ आनन्दित होकर सुन्दर मङ्गलगीत गा-गाकर नाच रही हैं॥ ३४७॥

**मागध सूत बंदि नट नागर। गावहिं जसु तिहु लोक उजागर॥**
**जय धुनि बिमल बेद बर बानी। दस दिसि सुनिअ सुमंगल सानी॥**

मागध, सूत, भाट और चतुर नट तीनों लोकोंके उजागर (सबको प्रकाश देनेवाले, परम प्रकाशस्वरूप) श्रीरामचन्द्रजीका यश गा रहे हैं। जयध्वनि तथा वेदकी निर्मल श्रेष्ठ वाणी सुन्दर मङ्गलसे सनी हुई दसों दिशाओंमें सुनायी पड़ रही है॥ १॥

**बिपुल बाजने बाजन लागे। नभ सुर नगर लोग अनुरागे॥**
**बने बराती बरनि न जाहीं। महा मुदित मन सुख न समाहीं॥**

बहुत-से बाजे बजने लगे। आकाशमें देवता और नगरमें लोग सब प्रेममें मग्न हैं। बराती ऐसे बने-ठने हैं कि उनका वर्णन नहीं हो सकता। परम आनन्दित हैं, सुख उनके मनमें समाता नहीं है॥ २॥

**पुरबासिन्ह तब राय जोहारे। देखत रामहि भए सुखारे॥**
**करहिं निछावरि मनिगन चीरा। बारि बिलोचन पुलक सरीरा॥**

तब अयोध्यावासियोंने राजाको जोहार (वन्दना) की। श्रीरामचन्द्रजीको देखते ही वे सुखी हो गये। सब मणियाँ और वस्त्र निछावर कर रहे हैं। नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भरा है और शरीर पुलकित हैं॥ ३॥

**आरति करहिं मुदित पुर नारी। हरषहिं निरखि कुअँर बर चारी॥**
**सिबिका सुभग ओहार उघारी। देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी॥**

नगरकी स्त्रियाँ आनन्दित होकर आरती कर रही हैं और सुन्दर चारों कुमारोंको देखकर हर्षित हो रही हैं। पालकियोंके सुन्दर परदे हटा-हटाकर वे दुलहिनोंको देखकर सुखी होती हैं॥ ४॥

**दो०—एहि बिधि सबही देत सुखु आए राजदुआर।**
**मुदित मातु परिछनि करहिं बधुन्ह समेत कुमार॥ ३४८॥**

इस प्रकार सबको सुख देते हुए राजद्वारपर आये। माताएँ आनन्दित होकर बहुओंसहित कुमारोंका परछन कर रही हैं॥ ३४८॥

**करहिं आरती बारहिं बारा। प्रेमु प्रमोदु कहै को पारा॥**
**भूषन मनि पट नाना जाती। करहिं निछावरि अगनित भाँती॥**

वे बार-बार आरती कर रही हैं। उस प्रेम और महान् आनन्दको कौन कह सकता है! अनेकों प्रकारके आभूषण, रत्न और वस्त्र तथा अगणित प्रकारकी अन्य वस्तुएँ निछावर कर रही हैं॥ १॥

**बधुन्ह समेत देखि सुत चारी। परमानंद मगन महतारी॥**
**पुनि पुनि सीय राम छबि देखी। मुदित सफल जग जीवन लेखी॥**

बहुओंसहित चारों पुत्रोंको देखकर माताएँ परमानन्दमें मग्न हो गयीं। सीताजी और श्रीरामजीकी छबिको बार-बार देखकर वे जगत्‌में अपने जीवनको सफल मानकर आनन्दित हो रही हैं॥ २॥

**सखीं सीय मुख पुनि पुनि चाही। गान करहिं निज सुकृत सराही॥**
**बरषहिं सुमन छनहिं छन देवा। नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा॥**

सखियाँ सीताजीके मुखको बार-बार देखकर अपने पुण्योंकी सराहना करती हुई गान कर रही हैं। देवता क्षण-क्षणमें फूल बरसाते, नाचते, गाते तथा अपनी-अपनी सेवा समर्पण करते हैं॥ ३॥

**देखि मनोहर चारिउ जोरीं। सारद उपमा सकल ढँढोरीं॥**
**देत न बनहिं निपट लघु लागीं। एकटक रहीं रूप अनुरागीं॥**

चारों मनोहर जोड़ियोंको देखकर सरस्वतीने सारी उपमाओंको खोज डाला; पर कोई उपमा देते नहीं बनी, क्योंकि उन्हें सभी बिलकुल तुच्छ जान पड़ीं। तब हारकर वे भी श्रीरामजीके रूपमें अनुरक्त होकर एकटक देखती रह गयीं॥ ४॥

**दो०—निगम नीति कुल रीति करि अरघ पाँवड़े देत।**
**बधुन्ह सहित सुत परिछि सब चलीं लवाइ निकेत॥ ३४९॥**

वेदकी विधि और कुलकी रीति करके अर्घ्य-पाँवड़े देती हुई बहुओंसमेत सब पुत्रोंको परछन करके माताएँ महलमें लिवा चलीं॥ ३४९॥

**चारि सिंघासन सहज सुहाए। जनु मनोज निज हाथ बनाए॥**
**तिन्ह पर कुअँरि कुअँर बैठारे। सादर पाय पुनीत पखारे॥**

स्वाभाविक ही सुन्दर चार सिंहासन थे, जो मानो कामदेवने ही अपने हाथसे बनाये थे। उनपर माताओंने राजकुमारियों और राजकुमारोंको बैठाया और आदरके साथ उनके पवित्र चरण धोये॥ १॥

**धूप दीप नैबेद बेद बिधि। पूजे बर दुलहिनि मंगलनिधि॥**
**बारहिं बार आरती करहीं। ब्यजन चारु चामर सिर ढरहीं॥**

फिर वेदकी विधिके अनुसार मङ्गलोंके निधान दूलह और दुलहिनोंकी धूप, दीप और नैवेद्य आदिके द्वारा पूजा की। माताएँ बारंबार आरती कर रही हैं और वर-वधुओंके सिरोंपर सुन्दर पंखे तथा चँवर ढल रहे हैं॥ २॥

**बस्तु अनेक निछावरि होहीं। भरीं प्रमोद मातु सब सोहीं॥**
**पावा परम तत्व जनु जोगीं। अमृतु लहेउ जनु संतत रोगीं॥**

अनेकों वस्तुएँ निछावर हो रही हैं; सभी माताएँ आनन्दसे भरी हुई ऐसी सुशोभित हो रही हैं मानो योगीने परम तत्त्वको प्राप्त कर लिया। सदाके रोगीने मानो अमृत पा लिया,॥ ३॥

**जनम रंक जनु पारस पावा। अंधहि लोचन लाभु सुहावा॥**
**मूक बदन जनु सारद छाई। मानहुँ समर सूर जय पाई॥**

जन्मका दरिद्री मानो पारस पा गया। अंधेको सुन्दर नेत्रोंका लाभ हुआ। गूँगेके मुखमें मानो सरस्वती आ विराजीं और शूरवीरने मानो युद्धमें विजय पा ली॥ ४॥

**दो०—एहि सुख ते सत कोटि गुन पावहिं मातु अनंदु।**
**भाइन्ह सहित बिआहि घर आए रघुकुलचंदु॥ ३५० (क)॥**

इन सुखोंसे भी सौ करोड़ गुना बढ़कर आनन्द माताएँ पा रही हैं। क्योंकि रघुकुलके चन्द्रमा श्रीरामजी विवाह करके भाइयोंसहित घर आये हैं॥ ३५० (क)॥

**लोक रीति जननीं करहिं बर दुलहिनि सकुचाहिं।**
**मोदु बिनोदु बिलोकि बड़ रामु मनहिं मुसुकाहिं॥ ३५० (ख)॥**

माताएँ लोकरीति करती हैं और दूलह-दुलहिनें सकुचाते हैं। इस महान् आनन्द और विनोदको देखकर श्रीरामचन्द्रजी मन-ही-मन मुसकरा रहे हैं॥ ३५० (ख)॥

**देव पितर पूजे बिधि नीकी। पूजीं सकल बासना जी की॥**
**सबहि बंदि मागहिं बरदाना। भाइन्ह सहित राम कल्याना॥**

मनकी सभी वासनाएँ पूरी हुई जानकर देवता और पितरोंका भलीभाँति पूजन किया। सबकी वन्दना करके माताएँ यही वरदान माँगती हैं कि भाइयोंसहित श्रीरामजीका कल्याण हो॥ १॥

**अंतरहित सुर आसिष देहीं। मुदित मातु अंचल भरि लेहीं॥**
**भूपति बोलि बराती लीन्हे। जान बसन मनि भूषन दीन्हे॥**

देवता छिपे हुए [अन्तरिक्षसे] आशीर्वाद दे रहे हैं और माताएँ आनन्दित हो आँचल भरकर ले रही हैं। तदनन्तर राजाने बरातियोंको बुलवा लिया और उन्हें सवारियाँ, वस्त्र, मणि (रत्न) और आभूषणादि दिये॥ २॥

**आयसु पाइ राखि उर रामहि। मुदित गए सब निज निज धामहि॥**
**पुर नर नारि सकल पहिराए। घर घर बाजन लगे बधाए॥**

आज्ञा पाकर, श्रीरामजीको हृदयमें रखकर वे सब आनन्दित होकर अपने-अपने घर गये। नगरके समस्त स्त्री-पुरुषोंको राजाने कपड़े और गहने पहनाये। घर-घर बधावे बजने लगे॥ ३॥

**जाचक जन जाचहिं जोइ जोई। प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई॥**
**सेवक सकल बजनिआ नाना। पूरन किए दान सनमाना॥**

याचक लोग जो-जो माँगते हैं, विशेष प्रसन्न होकर राजा उन्हें वही-वही देते हैं। सम्पूर्ण सेवकों और बाजेवालोंको राजाने नाना प्रकारके दान और सम्मानसे सन्तुष्ट किया॥ ४॥

**दो०—देहिं असीस जोहारि सब गावहिं गुन गन गाथ।**
**तब गुर भूसुर सहित गृहँ गवनु कीन्ह नरनाथ॥ ३५१॥**

सब जोहार (वन्दन) करके आशिष देते हैं और गुणसमूहोंकी कथा गाते हैं। तब गुरु और ब्राह्मणोंसहित राजा दशरथजीने महलमें गमन किया॥ ३५१॥

**जो बसिष्ट अनुसासन दीन्ही। लोक बेद बिधि सादर कीन्ही॥**
**भूसुर भीर देखि सब रानी। सादर उठीं भाग्य बड़ जानी॥**

वसिष्ठजीने जो आज्ञा दी, उसे लोक और वेदकी विधिके अनुसार राजाने आदरपूर्वक किया। ब्राह्मणोंकी भीड़ देखकर अपना बड़ा भाग्य जानकर सब रानियाँ आदरके साथ उठीं॥ १॥

**पाय पखारि सकल अन्हवाए। पूजि भली बिधि भूप जेवाँए॥**
**आदर दान प्रेम परिपोषे। देत असीस चले मन तोषे॥**

चरण धोकर उन्होंने सबको स्नान कराया और राजाने भलीभाँति पूजन करके उन्हें भोजन कराया। आदर, दान और प्रेमसे पुष्ट हुए वे सन्तुष्ट मनसे आशीर्वाद देते हुए चले॥ २॥

**बहु बिधि कीन्हि गाधिसुत पूजा। नाथ मोहि सम धन्य न दूजा॥**
**कीन्हि प्रसंसा भूपति भूरी। रानिन्ह सहित लीन्हि पग धूरी॥**

राजाने गाधि-पुत्र विश्वामित्रजीकी बहुत तरहसे पूजा की और कहा—हे नाथ! मेरे समान धन्य दूसरा कोई नहीं है। राजाने उनकी बहुत प्रशंसा की और रानियोंसहित उनकी चरणधूलिको ग्रहण किया॥ ३॥

**भीतर भवन दीन्ह बर बासू। मन जोगवत रह नृपु रनिवासू॥**
**पूजे गुर पद कमल बहोरी। कीन्हि बिनय उर प्रीति न थोरी॥**

उन्हें महलके भीतर ठहरनेको उत्तम स्थान दिया, जिसमें राजा और सब रनिवास उनका मन जोहता रहे (अर्थात् जिसमें राजा और महलकी सारी रानियाँ स्वयं उनके इच्छानुसार उनके आरामकी ओर दृष्टि रख सकें), फिर राजाने गुरु वसिष्ठजीके चरणकमलोंकी पूजा और विनती की। उनके हृदयमें कम प्रीति न थी (अर्थात् बहुत प्रीति थी)॥ ४॥

**दो०—बधुन्ह समेत कुमार सब रानिन्ह सहित महीसु।**
**पुनि पुनि बंदत गुर चरन देत असीस मुनीसु॥ ३५२॥**

बहुओंसहित सब राजकुमार और सब रानियोंसमेत राजा बार-बार गुरुजीके चरणोंकी वन्दना करते हैं और मुनीश्वर आशीर्वाद देते हैं॥ ३५२॥

**बिनय कीन्हि उर अति अनुरागें। सुत संपदा राखि सब आगें॥**
**नेगु मागि मुनिनायक लीन्हा। आसिरबादु बहुत बिधि दीन्हा॥**

राजाने अत्यन्त प्रेमपूर्ण हृदयसे पुत्रोंको और सारी सम्पत्तिको सामने रखकर [उन्हें स्वीकार करनेके लिये] विनती की। परन्तु मुनिराजने [पुरोहितके नाते] केवल अपना नेग माँग लिया और बहुत तरहसे आशीर्वाद दिया॥ १॥

**उर धरि रामहि सीय समेता। हरषि कीन्ह गुर गवनु निकेता॥**
**बिप्रबधू सब भूप बोलाईं। चैल चारु भूषन पहिराईं॥**

फिर सीताजीसहित श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें रखकर गुरु वसिष्ठजी हर्षित होकर अपने स्थानको गये। राजाने सब ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंको बुलवाया और उन्हें सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण पहनाये॥ २॥

**बहुरि बोलाइ सुआसिनि लीन्हीं। रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्हीं॥**
**नेगी नेग जोग सब लेहीं। रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं॥**

फिर सब सुआसिनियोंको (नगरभरकी सौभाग्यवती बहिन, बेटी, भानजी आदिको) बुलवा लिया और उनकी रुचि समझकर [उसीके अनुसार] उन्हें पहिरावनी दी। नेगी लोग सब अपना-अपना नेग-जोग लेते और राजाओंके शिरोमणि दशरथजी उनकी इच्छाके अनुसार देते हैं॥ ३॥

**प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने। भूपति भली भाँति सनमाने॥**
**देव देखि रघुबीर बिबाहू। बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू॥**

जिन मेहमानोंको प्रिय और पूजनीय जाना, उनका राजाने भलीभाँति सम्मान किया। देवगण श्रीरघुनाथजीका विवाह देखकर, उत्सवकी प्रशंसा करके फूल बरसाते हुए—॥ ४॥

**दो०—चले निसान बजाइ सुर निज निज पुर सुख पाइ।**
**कहत परसपर राम जसु प्रेम न हृदयँ समाइ॥ ३५३॥**

नगाड़े बजाकर और [परम] सुख प्राप्त कर अपने-अपने लोकोंको चले। वे एक-दूसरेसे श्रीरामजीका यश कहते जाते हैं। हृदयमें प्रेम समाता नहीं है॥ ३५३॥

**सब बिधि सबहि समदि नरनाहू। रहा हृदयँ भरि पूरि उछाहू॥**
**जहँ रनिवासु तहाँ पगु धारे। सहित बहूटिन्ह कुअँर निहारे॥**

सब प्रकारसे सबका प्रेमपूर्वक भलीभाँति आदर-सत्कार कर लेनेपर राजा दशरथजीके हृदयमें पूर्ण उत्साह (आनन्द) भर गया। जहाँ रनिवास था, वे वहाँ पधारे और बहुओंसमेत उन्होंने कुमारोंको देखा॥ १॥

**लिए गोद करि मोद समेता। को कहि सकइ भयउ सुखु जेता॥**
**बधू सप्रेम गोद बैठारीं। बार बार हियँ हरषि दुलारीं॥**

राजाने आनन्दसहित पुत्रोंको गोदमें ले लिया। उस समय राजाको जितना सुख हुआ उसे कौन कह सकता है? फिर पुत्रवधुओंको प्रेमसहित गोदीमें बैठाकर, बार-बार हृदयमें हर्षित होकर उन्होंने उनका दुलार (लाड़-चाव) किया॥ २॥

**देखि समाजु मुदित रनिवासू। सब कें उर अनंद कियो बासू॥**
**कहेउ भूप जिमि भयउ बिबाहू। सुनि सुनि हरषु होत सब काहू॥**

यह समाज (समारोह) देखकर रनिवास प्रसन्न हो गया। सबके हृदयमें आनन्दने निवास कर लिया। तब राजाने जिस तरह विवाह हुआ था वह सब कहा। उसे सुन-सुनकर सब किसीको हर्ष होता है॥ ३॥

**जनक राज गुन सीलु बड़ाई। प्रीति रीति संपदा सुहाई॥**
**बहुबिधि भूप भाट जिमि बरनी। रानी सब प्रमुदित सुनि करनी॥**

राजा जनकके गुण, शील, महत्त्व, प्रीतिकी रीति और सुहावनी सम्पत्तिका वर्णन राजाने भाटकी तरह बहुत प्रकारसे किया। जनकजीकी करनी सुनकर सब रानियाँ बहुत प्रसन्न हुईं॥ ४॥

**दो०—सुतन्ह समेत नहाइ नृप बोलि बिप्र गुर ग्याति।**
**भोजन कीन्ह अनेक बिधि घरी पंच गइ राति॥ ३५४॥**

पुत्रोंसहित स्नान करके राजाने ब्राह्मण, गुरु और कुटुम्बियोंको बुलाकर अनेक प्रकारके भोजन किये। [यह सब करते-करते] पाँच घड़ी रात बीत गयी॥ ३५४॥

**मंगलगान करहिं बर भामिनि। भै सुखमूल मनोहर जामिनि॥**
**अँचइ पान सब काहूँ पाए। स्त्रग सुगंध भूषित छबि छाए॥**

सुन्दर स्त्रियाँ मङ्गलगान कर रही हैं। वह रात्रि सुखकी मूल और मनोहारिणी हो गयी। सबने आचमन करके पान खाये और फूलोंकी माला, सुगन्धित द्रव्य आदिसे विभूषित होकर सब शोभासे छा गये॥ १॥

**रामहि देखि रजायसु पाई। निज निज भवन चले सिर नाई॥**
**प्रेम प्रमोदु बिनोदु बड़ाई। समउ समाजु मनोहरताई॥**

श्रीरामचन्द्रजीको देखकर और आज्ञा पाकर सब सिर नवाकर अपने-अपने घरको चले। वहाँके प्रेम, आनन्द, विनोद, महत्त्व, समय, समाज और मनोहरताको—॥ २॥

**कहि न सकहिं सत सारद सेसू। बेद बिरंचि महेस गनेसू॥**
**सो मैं कहौं कवन बिधि बरनी। भूमिनागु सिर धरइ कि धरनी॥**

सैकड़ों सरस्वती, शेष, वेद, ब्रह्मा, महादेवजी और गणेशजी भी नहीं कह सकते। फिर भला मैं उसे किस प्रकारसे बखानकर कहूँ? कहीं केंचुआ भी धरतीको सिरपर ले सकता है!॥ ३॥

**नृप सब भाँति सबहि सनमानी। कहि मृदु बचन बोलाईं रानी॥**
**बधू लरिकनीं पर घर आईं। राखेहु नयन पलक की नाईं॥**

राजाने सबका सब प्रकारसे सम्मान करके, कोमल वचन कहकर रानियोंको बुलाया और कहा—बहुएँ अभी बच्ची हैं, पराये घर आयी हैं। इनको इस तरहसे रखना जैसे नेत्रोंको पलकें रखती हैं (जैसे पलकें नेत्रोंकी सब प्रकारसे रक्षा करती हैं और उन्हें सुख पहुँचाती हैं, वैसे ही इनको सुख पहुँचाना)॥ ४॥

**दो०—लरिका श्रमित उनीद बस सयन करावहु जाइ।**
**अस कहि गे बिश्रामगृहँ राम चरन चितु लाइ॥ ३५५॥**

लड़के थके हुए नींदके वश हो रहे हैं, इन्हें ले जाकर शयन कराओ। ऐसा कहकर राजा श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मन लगाकर विश्रामभवनमें चले गये॥ ३५५॥

**भूप बचन सुनि सहज सुहाए। जरित कनक मनि पलँग डसाए॥**
**सुभग सुरभि पय फेन समाना। कोमल कलित सुपेतीं नाना॥**

राजाके स्वभावसे ही सुन्दर वचन सुनकर [रानियोंने] मणियोंसे जड़े सुवर्णके पलँग बिछवाये। [गद्दोंपर] गौके दूधके फेनके समान सुन्दर एवं कोमल अनेकों सफेद चादरें बिछायीं॥ १॥

**उपबरहन बर बरनि न जाहीं। स्त्रग सुगंध मनिमंदिर माहीं॥**
**रतनदीप सुठि चारु चँदोवा। कहत न बनइ जान जेहिं जोवा॥**

सुन्दर तकियोंका वर्णन नहीं किया जा सकता। मणियोंके मन्दिरमें फूलोंकी मालाएँ और सुगन्ध द्रव्य सजे हैं। सुन्दर रत्नोंके दीपकों और सुन्दर चँदोवेकी शोभा कहते नहीं बनती। जिसने उन्हें देखा हो, वही जान सकता है॥ २॥

**सेज रुचिर रचि रामु उठाए। प्रेम समेत पलँग पौढ़ाए॥**
**अग्या पुनि पुनि भाइन्ह दीन्ही। निज निज सेज सयन तिन्ह कीन्ही॥**

इस प्रकार सुन्दर शय्या सजाकर [माताओंने] श्रीरामचन्द्रजीको उठाया और प्रेमसहित पलँगपर पौढ़ाया। श्रीरामजीने बार-बार भाइयोंको आज्ञा दी। तब वे भी अपनी-अपनी शय्याओंपर सो गये॥ ३॥

**देखि स्याम मृदु मंजुल गाता। कहहिं सप्रेम बचन सब माता॥**
**मारग जात भयावनि भारी। केहि बिधि तात ताड़का मारी॥**

श्रीरामजीके साँवले सुन्दर कोमल अङ्गोंको देखकर सब माताएँ प्रेमसहित वचन कह रही हैं—हे तात! मार्गमें जाते हुए तुमने बड़ी भयावनी ताड़का राक्षसीको किस प्रकारसे मारा?॥ ४॥

**दो०—घोर निसाचर बिकट भट समर गनहिं नहिं काहु।**
**मारे सहित सहाय किमि खल मारीच सुबाहु॥ ३५६॥**

बड़े भयानक राक्षस, जो विकट योद्धा थे और जो युद्धमें किसीको कुछ नहीं गिनते थे, उन दुष्ट मारीच और सुबाहुको सहायकोंसहित तुमने कैसे मारा?॥ ३५६॥

**मुनि प्रसाद बलि तात तुम्हारी। ईस अनेक करवरें टारी॥**
**मख रखवारी करि दुहुँ भाईं। गुरु प्रसाद सब बिद्या पाईं॥**

हे तात! मैं बलैया लेती हूँ, मुनिकी कृपासे ही ईश्वरने तुम्हारी बहुत-सी बलाओंको टाल दिया। दोनों भाइयोंने यज्ञकी रखवाली करके गुरुजीके प्रसादसे सब विद्याएँ पायीं॥ १॥

**मुनितिय तरी लगत पग धूरी। कीरति रही भुवन भरि पूरी॥**
**कमठ पीठि पबि कूट कठोरा। नृप समाज महुँ सिव धनु तोरा॥**

चरणोंकी धूलि लगते ही मुनिपत्नी अहल्या तर गयी। विश्वभरमें यह कीर्ति पूर्णरीतिसे व्याप्त हो गयी। कच्छपकी पीठ, वज्र और पर्वतसे भी कठोर शिवजीके धनुषको राजाओंके समाजमें तुमने तोड़ दिया॥ २॥

**बिस्व बिजय जसु जानकि पाई। आए भवन ब्याहि सब भाई॥**
**सकल अमानुष करम तुम्हारे। केवल कौसिक कृपाँ सुधारे॥**

विश्वविजयके यश और जानकीको पाया और सब भाइयोंको ब्याहकर घर आये। तुम्हारे सभी कर्म अमानुषी हैं (मनुष्यकी शक्तिके बाहर हैं), जिन्हें केवल विश्वामित्रजीकी कृपाने सुधारा है (सम्पन्न किया है)॥ ३॥

**आजु सुफल जग जनमु हमारा। देखि तात बिधुबदन तुम्हारा॥**
**जे दिन गए तुम्हहि बिनु देखें। ते बिरंचि जनि पारहिं लेखें॥**

हे तात! तुम्हारा चन्द्रमुख देखकर आज हमारा जगत्‌में जन्म लेना सफल हुआ। तुमको बिना देखे जो दिन बीते हैं, उनको ब्रह्मा गिनतीमें न लावें (हमारी आयुमें शामिल न करें)॥ ४॥

**दो०—राम प्रतोषीं मातु सब कहि बिनीत बर बैन।**
**सुमिरि संभु गुर बिप्र पद किए नीदबस नैन॥ ३५७॥**

विनयभरे उत्तम वचन कहकर श्रीरामचन्द्रजीने सब माताओंको संतुष्ट किया। फिर शिवजी, गुरु और ब्राह्मणोंके चरणोंका स्मरण कर नेत्रोंको नींदके वश किया (अर्थात् वे सो रहे)॥ ३५७॥

**नीदउँ बदन सोह सुठि लोना। मनहुँ साँझ सरसीरुह सोना॥**
**घर घर करहिं जागरन नारीं। देहिं परसपर मंगल गारीं॥**

नींदमें भी उनका अत्यन्त सलोना मुखड़ा ऐसा सोह रहा था, मानो सन्ध्याके समयका लाल कमल सोह रहा हो। स्त्रियाँ घर-घर जागरण कर रही हैं और आपसमें (एक-दूसरीको) मङ्गलमयी गालियाँ दे रही हैं॥ १॥

**पुरी बिराजति राजति रजनी। रानीं कहहिं बिलोकहु सजनी॥**
**सुंदर बधुन्ह सासु लै सोईं। फनिकन्ह जनु सिरमनि उर गोईं॥**

रानियाँ कहती हैं—हे सजनी! देखो, [आज] रात्रिकी कैसी शोभा है, जिससे अयोध्यापुरी विशेष शोभित हो रही है! [यों कहती हुई] सासुएँ सुन्दर बहुओंको लेकर सो गयीं, मानो सर्पोंने अपने सिरकी मणियोंको हृदयमें छिपा लिया है॥ २॥

**प्रात पुनीत काल प्रभु जागे। अरुनचूड़ बर बोलन लागे॥**
**बंदि मागधन्हि गुनगन गाए। पुरजन द्वार जोहारन आए॥**

प्रात:काल पवित्र ब्राह्ममुहूर्तमें प्रभु जागे। मुर्गे सुन्दर बोलने लगे। भाट और मागधोंने गुणोंका गान किया तथा नगरके लोग द्वारपर जोहार करनेको आये॥ ३॥

**बंदि बिप्र सुर गुर पितु माता। पाइ असीस मुदित सब भ्राता॥**
**जननिन्ह सादर बदन निहारे। भूपति संग द्वार पगु धारे॥**

ब्राह्मणों, देवताओं, गुरु, पिता और माताओंकी वन्दना करके आशीर्वाद पाकर सब भाई प्रसन्न हुए। माताओंने आदरके साथ उनके मुखोंको देखा। फिर वे राजाके साथ दरवाजे (बाहर) पधारे॥ ४॥

**दो०—कीन्हि सौच सब सहज सुचि सरित पुनीत नहाइ।**
**प्रातक्रिया करि तात पहिं आए चारिउ भाइ॥ ३५८॥**

स्वभावसे ही पवित्र चारों भाइयोंने सब शौचादिसे निवृत्त होकर पवित्र सरयू नदीमें स्नान किया और प्रात:क्रिया (सन्ध्या-वन्दनादि) करके वे पिताके पास आये॥ ३५८॥

## नवाह्नपारायण, तीसरा विश्राम

**भूप बिलोकि लिए उर लाई। बैठे हरषि रजायसु पाई॥**
**देखि रामु सब सभा जुड़ानी। लोचन लाभ अवधि अनुमानी॥**

राजाने देखते ही उन्हें हृदयसे लगा लिया। तदनन्तर वे आज्ञा पाकर हर्षित होकर बैठ गये। श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकर और नेत्रोंके लाभकी बस यही सीमा है, ऐसा अनुमानकर सारी सभा शीतल हो गयी (अर्थात् सबके तीनों प्रकारके ताप सदाके लिये मिट गये)॥ १॥

**पुनि बसिष्टु मुनि कौसिकु आए। सुभग आसनन्हि मुनि बैठाए॥**
**सुतन्ह समेत पूजि पद लागे। निरखि रामु दोउ गुर अनुरागे॥**

फिर मुनि वसिष्ठजी और विश्वामित्रजी आये। राजाने उनको सुन्दर आसनोंपर बैठाया और पुत्रों-समेत उनकी पूजा करके उनके चरणों लगे। दोनों गुरु श्रीरामजीको देखकर प्रेममें मुग्ध हो गये॥ २॥

**कहहिं बसिष्टु धरम इतिहासा। सुनहिं महीसु सहित रनिवासा॥**
**मुनि मन अगम गाधिसुत करनी। मुदित बसिष्ट बिपुल बिधि बरनी॥**

वसिष्ठजी धर्मके इतिहास कह रहे हैं और राजा रनिवाससहित सुन रहे हैं। जो मुनियोंके मनको भी अगम्य है, ऐसी विश्वामित्रजीकी करनीको वसिष्ठजीने आनन्दित होकर बहुत प्रकारसे वर्णन किया॥ ३॥

**बोले बामदेउ सब साँची। कीरति कलित लोक तिहुँ माची॥**
**सुनि आनंदु भयउ सब काहू। राम लखन उर अधिक उछाहू॥**

वामदेवजी बोले—ये सब बातें सत्य हैं। विश्वामित्रजीकी सुन्दर कीर्ति तीनों लोकोंमें छायी हुई है। यह सुनकर सब किसीको आनन्द हुआ। श्रीराम-लक्ष्मणके हृदयमें अधिक उत्साह (आनन्द) हुआ॥ ४॥

**दो०—मंगल मोद उछाह नित जाहिं दिवस एहि भाँति।**
**उमगी अवध अनंद भरि अधिक अधिक अधिकाति॥ ३५९॥**

नित्य ही मङ्गल, आनन्द और उत्सव होते हैं; इस तरह आनन्दमें दिन बीतते जाते हैं। अयोध्या आनन्दसे भरकर उमड़ पड़ी, आनन्दकी अधिकता अधिक-अधिक बढ़ती ही जा रही है॥ ३५९॥

**सुदिन सोधि कल कंकन छोरे। मंगल मोद बिनोद न थोरे॥**
**नित नव सुखु सुर देखि सिहाहीं। अवध जन्म जाचहिं बिधि पाहीं॥**

अच्छा दिन (शुभ मुहूर्त) शोधकर सुन्दर कङ्कण खोले गये। मङ्गल, आनन्द और विनोद कुछ कम नहीं हुए (अर्थात् बहुत हुए)। इस प्रकार नित्य नये सुखको देखकर देवता सिहाते हैं और अयोध्यामें जन्म पानेके लिये ब्रह्माजीसे याचना करते हैं॥ १॥

**बिस्वामित्रु चलन नित चहहीं। राम सप्रेम बिनय बस रहहीं॥**
**दिन दिन सयगुन भूपति भाऊ। देखि सराह महामुनिराऊ॥**

विश्वामित्रजी नित्य ही चलना (अपने आश्रम जाना) चाहते हैं, पर रामचन्द्रजीके स्नेह और विनयवश रह जाते हैं। दिनों-दिन राजाका सौगुना भाव (प्रेम) देखकर महामुनिराज विश्वामित्रजी उनकी सराहना करते हैं॥ २॥

**मागत बिदा राउ अनुरागे। सुतन्ह समेत ठाढ़ भे आगे॥**
**नाथ सकल संपदा तुम्हारी। मैं सेवकु समेत सुत नारी॥**

अन्तमें जब विश्वामित्रजीने विदा माँगी, तब राजा प्रेममग्न हो गये और पुत्रोंसहित आगे खड़े हो गये। [वे बोले—] हे नाथ! यह सारी सम्पदा आपकी है। मैं तो स्त्री-पुत्रोंसहित आपका सेवक हूँ॥ ३॥

**करब सदा लरिकन्ह पर छोहू। दरसनु देत रहब मुनि मोहू॥**
**अस कहि राउ सहित सुत रानी। परेउ चरन मुख आव न बानी॥**

हे मुनि! लड़कोंपर सदा स्नेह करते रहियेगा और मुझे भी दर्शन देते रहियेगा। ऐसा कहकर पुत्रों और रानियोंसहित राजा दशरथजी विश्वामित्रजीके चरणोंपर गिर पड़े, [प्रेमविह्वल हो जानेके कारण] उनके मुँहसे बात नहीं निकलती॥ ४॥

**दीन्हि असीस बिप्र बहु भाँती। चले न प्रीति रीति कहि जाती॥**
**रामु सप्रेम संग सब भाई। आयसु पाइ फिरे पहुँचाई॥**

ब्राह्मण विश्वामित्रजीने बहुत प्रकारसे आशीर्वाद दिये और वे चल पड़े, प्रीतिकी रीति कही नहीं जाती। सब भाइयोंको साथ लेकर श्रीरामजी प्रेमके साथ उन्हें पहुँचाकर और आज्ञा पाकर लौटे॥ ५॥

**दो०—राम रूपु भूपति भगति ब्याहु उछाहु अनंदु।**
**जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधिकुलचंदु॥ ३६०॥**

गाधिकुलके चन्द्रमा विश्वामित्रजी बड़े हर्षके साथ श्रीरामचन्द्रजीके रूप, राजा दशरथजीकी भक्ति, [चारों भाइयोंके] विवाह और [सबके] उत्साह और आनन्दको मन-ही-मन सराहते जाते हैं॥ ३६०॥

**बामदेव रघुकुल गुर ग्यानी। बहुरि गाधिसुत कथा बखानी॥**
**सुनि मुनि सुजसु मनहिं मन राऊ। बरनत आपन पुन्य प्रभाऊ॥**

वामदेवजी और रघुकुलके गुरु ज्ञानी वसिष्ठजीने फिर विश्वामित्रजीकी कथा बखानकर कही। मुनिका सुन्दर यश सुनकर राजा मन-ही-मन अपने पुण्योंके प्रभावका बखान करने लगे॥ १॥

**बहुरे लोग रजायसु भयऊ। सुतन्ह समेत नृपति गृहँ गयऊ॥**
**जहँ तहँ राम ब्याहु सबु गावा। सुजसु पुनीत लोक तिहुँ छावा॥**

आज्ञा हुई तब सब लोग [अपने-अपने घरोंको] लौटे। राजा दशरथजी भी पुत्रोंसहित महलमें गये। जहाँ-तहाँ सब श्रीरामचन्द्रजीके विवाहकी गाथाएँ गा रहे हैं। श्रीरामचन्द्रजीका पवित्र सुयश तीनों लोकोंमें छा गया॥ २॥

**आए ब्याहि रामु घर जब तें। बसइ अनंद अवध सब तब तें॥**
**प्रभु बिबाहँ जस भयउ उछाहू। सकहिं न बरनि गिरा अहिनाहू॥**

जबसे श्रीरामचन्द्रजी विवाह करके घर आये, तबसे सब प्रकारका आनन्द अयोध्यामें आकर बसने लगा। प्रभुके विवाहमें जैसा आनन्द-उत्साह हुआ, उसे सरस्वती और सर्पोंके राजा शेषजी भी नहीं कह सकते॥ ३॥

**कबिकुल जीवनु पावन जानी। राम सीय जसु मंगल खानी॥**
**तेहि ते मैं कछु कहा बखानी। करन पुनीत हेतु निज बानी॥**

श्रीसीतारामजीके यशको कविकुलके जीवनको पवित्र करनेवाला और मङ्गलोंकी खान जानकर, इससे मैंने अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिये कुछ (थोड़ा-सा) बखानकर कहा है॥ ४॥

**छं०—निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसीं कह्यो।**
**रघुबीर चरित अपार बारिधि पारु कबि कौनें लह्यो॥**
**उपबीत ब्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं।**
**बैदेहि राम प्रसाद ते जन सर्बदा सुखु पावहीं॥**

अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिये तुलसीने रामका यश कहा है। [नहीं तो] श्रीरघुनाथजीका चरित्र अपार समुद्र है, किस कविने उसका पार पाया है ? जो लोग यज्ञोपवीत और विवाहके मङ्गलमय उत्सवका वर्णन आदरके साथ सुनकर गावेंगे, वे लोग श्रीजानकीजी और श्रीरामजीकी कृपासे सदा सुख पावेंगे।

**सो०—सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।**
**तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु॥ ३६१॥**

श्रीसीताजी और श्रीरघुनाथजीके विवाह-प्रसङ्गको जो लोग प्रेमपूर्वक गायें-सुनेंगे, उनके लिये सदा उत्साह (आनन्द)-ही-उत्साह है; क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीका यश मङ्गलका धाम है॥ ३६१॥

## मासपारायण, बारहवाँ विश्राम

**इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने प्रथमः सोपानः समाप्तः।**

कलियुगके सम्पूर्ण पापोंको विध्वंस करनेवाले श्रीरामचरितमानसका यह पहला सोपान समाप्त हुआ॥

**( बालकाण्ड समाप्त )**